आचार्यश्री तुलसी धवल समारोह के अभिनन्दन में

श्रद्धेय के प्रति

रचयिता

आचार्यश्री तुलसी

सम्पादक

मुनि श्री सागरमलजी · मुनि श्री महेन्द्रकुमारजी

आत्माराम एण्ड संस

दिल्ली जयपुर जालन्धर. मेरठ

SHRADDHEYA KE PRATI

Acharya Shri Tulsi

Rs. 2.25

[श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा, कलकत्ता के सौजन्य से प्राप्त]

प्रकाशक

मुद्रक : [illegible]

सम्पादकीय

जैन धर्म मे देव, गुरु और धर्म की त्रिपदी वह मदाकिनी है जिसके श्लाघा जल मे स्नात व्यक्ति अवश्य ही पाप-मुक्त होता है। देव वे पुण्य आत्माए हैं जो भव-परम्परा के सर्जक राग और द्वेष के दल-दल से ऊपर उठ चुकी हैं, जिनका अज्ञान रूप अन्धकार मिट चुका है। वे वीतराग, अर्हत्, जिन और तीर्थंकर हैं। अपने परिपूर्ण ज्ञान मे वे विश्वव्यापी हैं। भूत, वर्तमान और अनागत उनके लिए हस्तगत आमलक की तरह स्पष्ट हैं। वे प्रत्येक अवसर्पण और उत्सर्पण के कालार्ध मे चौबीस चौबीस होते हैं। वर्तमान अवसर्पण मे आदि देव ऋषभदेव थे और चौबीसवें देव भगवान् श्री महावीर।

गुरु की गरिमा भगवान् श्री महावीर के शब्दो मे है—अग्निहोत्री विप्र जिस प्रकार नाना आहुतियो और मन्त्र-पदो से अग्नि की पूजा करता है, इसी प्रकार अनन्त ज्ञानी शिष्य को भी गुरु के प्रति श्रद्धाशील रहना चाहिए। वे गुरु अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पाच महाव्रतो का पालन करते हैं। आत्म-कल्याण और जन-कल्याण उनके जीवन का सहज ध्येय होता है। वे भी अरिहन्त की तरह ही उपास्य और श्रद्धेय होते हैं। जैन धर्म मे ही नही, अन्य धर्मों मे भी गुरु का स्थान ईश्वरोपम माना गया है। निर्गुण मार्गी श्री कबीर कहते हैं—

> 'सब धरती कागद करू, लेखनि सब बनराय।
> सात समुन्द की मसि करू, गुरु-गुन लिखा न जाय ॥'

गुरु-कृपा के सम्बन्ध मे वे कहते हैं—

> 'पगुल मेरु सुमेरु उलघे, त्रिभुवन मुक्ता डोले।
> गूगा ज्ञान विज्ञान प्रकासै, अनहद वाणी बोले ॥'

धर्म आत्म-शुद्धि का अनन्य साधन है। अवीतराग की वाणी मे दोष-सभवता है, अत वह वीतराग की वाणी रूप है। धर्म का मूर्त आधार धर्म सघ है, साधु सघ है, इसलिए वह भी श्लाघ्य और श्रद्धेय है।

प्रस्तुत 'श्रद्धेय के प्रति' पुस्तक मे आचार्य श्री तुलसी की देव, गुरु व धर्म की श्लाघा मे की गई रचनाए हैं। उनकी उल्लेखनीय विशेषता यह है कि वे मुख्यत महावीर जयन्ती, चरम महोत्सव, मर्यादा महोत्सव आदि विशेष प्रसगों

पर रची गई है। सामान्य रसवती और पर्व-सम्बद्ध रसवती मे महान् अन्तर रहता ही है। इसी प्रकार विशेष पर्वो के सम्बन्ध में रची गई गीतिकाएं विशेष होती ही है। देव प्रकरण मे आचार्य श्री के श्रद्धेय भगवान् ऋषभदेव, भगवान् शान्तिनाथ, भगवान् श्री महावीर आदि तीर्थंकर है।

गुरु प्रकरण में उनके श्रद्धेय तेरापन्थ-प्रवर्त्तक आचार्य श्री भिक्षु है। वे एक निरुपम महापुरुष थे। सयम और साधना का पुनरुज्जीवन उनका व्रत था। कूड़े-कचरे की अनेक तहों मे दवी साधना का महार्घ्य मणि को निकाल लेना कोई सहज वात नही थी। उन्होने अपने आपको कसा, पर संयम को वृद्धिगंत होने दिया। उन्होने स्वय मान और अपमान को समबुद्धि से सहा, पर सत्य का सम्मान बढाया। वे स्वयं कंटकाकुल मार्ग पर चले, पर धर्म को निष्कटक मार्ग पर ले आए। ऐसे महापुरुष के प्रति अर्पित श्रद्धाजलिया और वे भी आचार्य श्री तुलसी द्वारा, जिनकी अभिधा ही जिनका परिपूर्ण परिचय है, किसके मानस को श्रद्धा और विराग के अजस्र आनन्द मे ओत-प्रोत नही कर देती। और इस प्रकरण मे उनके श्रद्धेय है—श्रीमज्जयाचार्य, श्रीमद डालगणी व उनके अपने दीक्षा-गुरु श्रीकालूगणी।

त्रिपदी का तीसरा तत्त्व धर्म है। उसका आधार धर्म संघ है। बौद्ध लोग कहते है—'सघ सरणं गच्छामि' मै सघ की शरण जाता हूँ। सचमुच ही तेरा-पन्थ जैसा संघ व्यक्ति का त्राण वनता है। जहां व्यक्ति समुदाय मे ऐसा मिल जाता है, जैसे वर्षा की बूंद समुद्र मे। व्यक्ति और समुदाय की यह अभिन्नता ही पारमार्थिक आनन्द की सृष्टि करती है। संघ का ध्येय है—ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की अभिवृद्धि। उसका आधार है—सह जीवन के योग्य व्यवस्था। व्यवस्था साधना मे साधक भी वनती है, वाधक भी। जो वाधक वनती है, वह या तो अव्यवस्था है या असद् व्यवस्था। व्यवस्था मे व्यक्ति का चैतन्य कुण्ठित नही वनता। अव्यवस्था या असद् व्यवस्था के दुष्परिणाम तत्काल अपने आपको प्रकट करते है। एक वार गौतम वुद्ध अपने विशाल भिक्षु समुदाय के साथ आराम में रात्रि-विश्राम कर रहे थे। आधी रात के लगभग सारिपुत्त के खांसने की आवाज उनके कानों मे पड़ी और अचानक उनकी नीद टूटी। उन्होने अन्य भिक्षुओ से पूछा—हम सव इस प्रासाद के भव्य कक्षो मे सो रहे है और सारिपुत्त वाहर खांस रहा है। क्या वह वही किसी वृक्ष की छाया मे सोया है? भिक्षुओ ने कहा—भगवन्! उन्हें यहा स्थान नही मिला, इसलिए उन्हें तरुवासी होकर ही आज की रात काटनी पड़ रही है। गौतम वुद्ध ने कहा—ऐसा क्यो हुआ? छोटे-वड़े सभी भिक्षुओ को स्थान मिला और मेरे धर्म सेनापति सारिपुत्त को स्थान नही मिला? भिक्षु—

भगवन् ! आराम मे पहुँचते ही सब भिक्षु शय्या रोकने की अहमहमिका मे लगते हैं। षड्वर्गीय भिक्षु इस दौड मे सबसे आगे रहते हैं। यही कारण है कि महाप्रज्ञ सारिपुत्त को शय्या नहीं मिली और वृक्ष-मूल पर ही सारी रात काटनी पड रही है।

गौतम बुद्ध को इस अव्यवस्था और असद् व्यवस्था पर भारी दुख हुआ। उन्होने सोचा, शीघ्र ही मुझे इस विषय मे एक सर्वमान्य व्यवस्था कर देनी चाहिए। प्रात काल सब भिक्षुओ को एकत्रित कर रात की घटना कह सुनाई और सबसे पूछा—भिक्षुओ ! अपनी-अपनी समझ से बताओ कि भिक्षु सघ मे आहार, पानी, शय्या और आदर पहले किसे मिलना चाहिए अर्थात् इन विषयो मे क्रमिक सविभाग कैसे हो ? क्षत्रिय भिक्षुओ ने कहा—इन विषयो मे पहला स्थान क्षत्रिय भिक्षुओ का होना चाहिए, क्योकि वे राजकुल से आये हैं, वे राजमहलो के भोगोपभोग मे रहे हैं। ब्राह्मण भिक्षुओ ने कहा—प्रथम स्थान ब्राह्मण भिक्षुओ का होना चाहिए। वे समाज मे भी गुरु स्थानीय रहे हैं। अन्यान्य भिक्षुओ ने और भी अनेको विकल्प बुद्ध को सुझाये, पर उन्हें एक भी विकल्प पसन्द नही आया। अत मे उन्होने स्वय कहा—आज से मैं व्यवस्था करता हूँ, उक्त सविभाग दीक्षा-क्रम से चलाये जायें। त्याग, सयम और चारित्र मे जो ज्येष्ठ हैं, वे ही वस्तुत आदरास्पद हैं। उस दिन से यही व्यवस्था भिक्षु सघ मे प्रवृत्त हो गई। तेरापन्थ सदा से ही व्यवस्था के उत्कर्ष पर रहा है, प्राक्तन आचार्यों ने सघ सम्बन्धित कार्य-कलापो के लिए समुचित व्यवस्थाए दी और उनका विकास आज भी सतत प्रवाही है। आचार्यवर ने कुछ एक गीतिकाओ मे तेरापथ का समग्र सविधान ही उपस्थित कर दिया है। एक गीतिका विशेष मे वे कहते हैं—

सकल साधु अरु साधवो वहो एक सुगुरु री आण हो।
चेला चेली आप आपरा कोई मत करो, करो पचखाण हो॥

गुरु भाई चेला भणी कोइ सूपै गुरु निज भार हो।
जीवन भर मुनि साहुणो कोइ मत लोपो तसु कार हो॥

आवै जिणनै मुडनै कोइ मति रे वधाओ भेख हो।
पूरी कर कर पारखा कोइ दीक्षा दिज्यो देख देख हो॥

बोल श्रद्धा आचार रो कोइ नवो निकलियो जाण हो।
मत चरचो जिण तिण कनै करो गणपति वचन प्रमाण हो॥

जो हिरदे वैसे नहीं तोइ मति करो खींचाताण हो।
केवलियां पर छोड़्यो आ है अरिहन्ता री आण हो॥

उतरती गणी गण तणी कोइ मति करो, मति सुणो सैण हो।
संजम पालो सांतरो कोइ पल-पल छिन-छिन रैन हो॥

अपछन्दा गण स्यूं टलै कोइ एक, दो, तीन अवनीत हो।
साधु त्यांने सरधो मति कोइ मत करो परिचय-प्रीत हो॥

इत्यादिक नियमे भरचो कोई लेख लिख्यो गुरुराज हो।
संवत् अठारै गुणसठै कोइ माह सुदि सप्तमी साज हो॥

मर्यादा के महत्व पर कितनी आस्था व्यक्त की गई है—

गुरुवर हमको मर्यादा का आधार चाहिए,
उच्च आचार चाहिए,
सत्य साकार चाहिए,
विमल व्यवहार चाहिए,
सदा सुविचार चाहिए।

मर्यादा ही जीवन है, मर्यादा जीवन धन है।
गण-वन में इसका ही प्राकार चाहिए॥

मर्यादा चाहे छोटी, जीवन की सही कसौटी।
संयम को संयम का व्यापार चाहिए॥

छूटे तो तन यह छूटे, शासन सम्बन्ध न टूटे।
सब में ऐसे ऊंडे संस्कार चाहिए॥

× × ×

मर्यादामय जीवन सारो, मर्यादा री मान।
आत्म-नियन्त्रण अरु अनुशासन है शासण री शान॥

आचार्य भिक्षु के प्रति कितनी सजीव श्रद्धांजलि अर्पित की गई है—

दीपां के लाल दुलारे!
स्वीकार करो श्रद्धांजलियां रे!
जिनमत -- गगन – सितारे!
अहो! अखिल संघ-अंखियों के तारे!

भक्तो के हृदय निवासी,
भक्तिमय कुसुम की राशि,
यह लो, लाखो जन के मन के रखवारे।

फिर क्या उपहार सजाए ?
फिर क्या प्रभु चरण चढाए ?
इमसे बढ, वस्तु कौन-सी पास हमारे।

तुमने जो राह दिखाई,
घट-घट मे ज्योति जगाई,
छाइ है, यत्र-तत्र रो-रो मे सारे।

प्रतिपल तुम पद-चिह्नो पर,
चलते व चलेगे जी भर,
इससे बढकर क्या स्मारक प्रभो! तुम्हारे।

प्राणी-प्राणो दिल-प्रागण,
रोपें श्रद्धाकुर क्षण-क्षण,
जीवन के कण-कण मे यह प्रण है प्यारे।

हममे हो अतुल मनोवल,
कायरता क्षय हो वल-जल,
अविरल ऐसी करुणा का स्रोत वहा रे।

श्रुति मे, स्मृति मे, सस्कृति मे,
रमते रहो तुम कृति-कृति मे,
गूजे कोटि-कोटि 'तुलसी' जय-नारे।

देव प्रकरण मे आचार्यवर गाते है—

लो जैन जगत के तीर्थंकर मेरा प्रणाम लो।
दो वीतरागता का वर, वन्दन निष्काम लो॥

तुम तीर्थ नही तीर्थंकर, क्या गुण गरिमा गाए।
भव-सिन्धु-भवर मे भटके, (इन) भक्तो को थाम लो॥

स्वाध्याय प्रेमी वन्धुओ के लिए तो इस ग्रथ की निरुपम उपयोगिता है ही, पर मर्यादा महोत्सव आदि पर्व सम्बद्ध गीतिकाओ का व्यवस्थित सकलन

होने के कारण इसकी ऐतिहासिक उपयोगिता भी बन गई है। प्रत्येक गीति में तात्कालिक वातावरण का आभास मिलता है और आचार्यवर की दृढ आत्म-शक्ति का भी।

जो हमारा हो विरोध,
हम उसे समझें विनोद,
सत्य सत्य शोध में तब ही सफलता पायेंगे।

ये पद्य जयपुर चतुर्मास के भयंकरतम दीक्षा-विरोध की ओर संकेत करते है। इसी प्रकार विभिन्न गीतिकाओं में संघ के अन्तरंग व बहिरंग विभिन्न वातावरणो का संकेत मिलता है। संवत्, तिथि, गांव व साधु-संख्या आदि का भी ऐतिहासिक ब्यौरा गीतिकाओं में सुरक्षित है। पिछले युगों मे संकलन-प्रथा विकसित नही थी, इसीलिए बहुत सारे ऐतिहासिक तथ्य आज विलुप्त हो गए है। वर्तमान युग ने बिखरी चीजों को बटोरकर रखने का दृष्टिकोण दिया है। प्रस्तुत ग्रन्थ भी समय-समय पर रची गई रचनाओ का संकलन है और आने वाले युगों में इसका ऐतिहासिक महत्त्व उभरता रहेगा, यह निस्संदेह है।

मुनि महेन्द्रकुमार 'प्रथम'

१६ जुलाई, १९६१
वृद्धिचन्द जैन स्मृति भवन
नयाबाजार, दिल्ली

अनुक्रम

देव

गुरु

धर्म

राजस्थानी विभाग

देव

गुरु

देव

१

नमो अरिहन्ताण

श्रद्धा, विनय समेत, नमो अरिहन्ताण ।
प्राञ्जल, प्रणत सचेत नमो अरिहन्ताण ॥

आध्यात्मिक पथ के अधिनेता ।
वीतराग प्रभु विश्व-विजेता ।
शरच्चन्द्र सम श्वेत,
नमो अरिहन्ताण ॥१॥

अक्षय, अरुज, अनन्त, अचल जो ।
अटल, अरूप, स्वरूप अमल जो ।
अजरामर अद्वैत,
नमो सिद्धाण ॥२॥

धर्म-सघ के जो सवाहक ।
निर्मल धर्म-नीति निर्वाहक ।
शासन मे समवेत,
नमो आयरियाण ॥३॥

आगम अध्यापन मे अधिकृत ।
विमल कमल सम जीवन अविकृत ।
शम, सयम समुपेत,
नमो उवज्झायाण ॥४॥

आत्म-साधना लीन अनवरत ।
विषय-वासनाओ से उपरत ।
'मुनर्नो' है अनिकेत,
नमो (लोए) सव्व साहूण ॥५॥

सघ—धर्म की नव ही

: २ :

हे दयालो देव ! तेरी शरण हम सब आ रहे ।
शुद्ध मन से एक तेरा, ध्यान हम सब ध्या रहे ।।

मोह, मद, ममता के त्यागी, वीतरागी तुम प्रभो !
हम भी उस पथ के पथिक हों, भावना यही भा रहे ।।१।।

सद्‌गुरु में हो हमारी भक्ति सच्चे भाव से ।
धर्म रग-रग में रमे हरदम यही हम चाह रहे ।।२।।

दिल से पापों के प्रति प्रतिपल हमारी हो घृणा ।
प्रेम हो सत्संग से यह लालसा दिल ला रहे ।।३।।

दूसरों की देख बढ़ती हो न ईर्ष्या लेश भी ।
सर्वदा ग्राहक गुणों के हों हृदय से गा रहे ।।४।।

त्यागमय जीवन बिताएं, शान्तिमय बर्ताव हो ।
भाव हो समभाव तेरा पंथ, 'तुलसी' पा रहे ।।५।।

लय—हे प्रभु आनन्ददाता

३

लो जैन जगत के तीर्थङ्कर मेरा प्रणाम लो।
दो वीतरागता का वर, वन्दन निष्काम लो॥

तुम तीर्थ नहीं तीर्थङ्कर, क्या गुण गरिमा गाए।
भव-सिन्धु-भवर मे भटके, (इन) भक्तो को थाम लो॥१॥

तुम सकल चराचर द्रष्टा, अविकल विज्ञान हो।
तुम अमित शक्ति, दृढ दर्शन, अविचल विश्राम लो॥२॥

तुम तीन भुवन के नायी, (पर) उत्तरदायी नही।
सुख-दुख जब निज कर्माश्रित, तुम ज्योतिर्धाम लो॥३॥

तुम आत्म-विजेता नेता, 'तुलसी' के त्राण हो।
तुम सत्य शिव सुन्दर, स्तवना आठू याम लो॥४॥

लय—प्रभु पार्श्वदेव के चरणो मे

देव ! दो दर्शन तुम्हारा
शान्ति जिन मैं शरण आया ।
विना प्रभु-दर्शन तड़फती
मीन ज्यों यह मेरी काया ।।

शिखर धर वर मन्दिरों के
द्वार भी जा खटखटाए ।
जड़ाकृति प्रतिमा प्रतिष्ठित
स्वर्णमय शिर छत्र छाए ।
सुवह-शाम हंगाम से
होती निहारी आरती मैं ।
विविध वाद्य, विनोद्र, गायन
गा रहे सुर-भारती में ।

वाह्य आडम्बरों में भगवन् !
न तुमको देख पाया ।
देव ! दो दर्शन तुम्हारा
शान्ति जिन मै शरण आया ।।१।।

स्वच्छ सुरभित सलिल से
जिनराज ! तुमको जन नहलाते ।
मिष्ट नव-नव भोज्य भगवन् !
बिन बुभुक्षा जन खिलाते ।
कलित कोमल कुसुम कलिका
भेंट नव नेवज चढ़ाते ।
सुरभि, धूप, सुरूप चन्दन
चरच सुन्दरता बढ़ाते ।

लय—मातृ मन्दिर मे

वीतराग विडम्बना सी
देख दिल मे दर्द छाया।
देव ! दो दर्शन तुम्हारा
शान्ति जिन मैं शरण आया ॥२॥

समारोहो से सुसज्जित
आपकी होती सवारी।
धी धी धपमप धि धि की
धिक्कट बज रहे आतोद्य भारी।
सृजत रथ यात्रादि मिष
हिंसा, अहिंसा के पुजारी।
जब निहारू नयन से
हो हृदय मे दुविधा दुधारी।

कहा वह विज्ञानमय त्रिभुवर ?
कहा वह छद्म छाया ?
देव ! दो दर्शन तुम्हारा
शान्ति जिन मैं शरण आया ॥३॥

चेतनामय देव को
पाषाणमय कैसे बनाऊ ?
जो बने पाषाण के
कैसे उन्हे जिन-रूप गाऊ ?
सर्वतन्त्र स्वतन्त्र जो, कैसे
दिवासे मे बिठाऊ ?
जो बने बन्दी, उन्हे
कैसे विनय से सर झुकाऊ ?

अमल अज अविकार साक्षात्कार
करने मन उम्हाया।
देव ! दो दर्शन तुम्हारा
शान्ति जिन मैं शरण आया ॥४॥

आज चारों ओर घोर
अशान्ति जन-जन को सताती।
रो रहा मानव-हृदय यों
सिकुड़ती जाती है छाती।
इस विषाक्त वृत्तान्त में
तू ही सहारा एक शान्ति।
ध्या रहे सब ध्यान तेरा
दूर हो झट क्लेश-क्रान्ति।

अमर आशा को लिए
'तुलसी' चरण में शिर झुकाया।
देव ! दो दर्शन तुम्हारा
शान्ति जिन मैं शरण आया ॥५॥

५

महावीर प्रभु के चरणों मे
श्रद्धा के कुसुम चढाए हम।
उनके आदर्शों को अपना
जीवन की ज्योति जगाए हम ॥

तप संयममय शुभ साधन से,
आराध्य-चरण आराधन से,
बन मुक्त विकारों से सहसा,
अब आत्म-विजय कर पाए हम ॥१॥

दृढ निष्ठा नियम निभाने मे,
हो प्राण-बलि प्रण पाने मे,
मजबूत मनोबल हो ऐसा,
कायरता कभी न लाए हम ॥२॥

धन-लोलुपता, पद-लोलुपता,
न सताए कभी विकार-व्यथा,
निष्काम स्व-पर कल्याण काम,
जीवन अर्पण कर पाए हम ॥३॥

गुरुदेव शरण मे लीन रहे,
निर्भीक धर्म की बात कहे,
अविचल दिल सत्य, अहिंसा का,
दुनिया को सुपथ दिखाए हम ॥४॥

प्राणी-प्राणी सह मैत्री सजे,
ईर्ष्या, मत्सर, अभिमान तजे,
सहनी-करनी इकसार बना,
'तुलसी' तेरा पथ पाए हम ॥५॥

लय—महावीर प्रभु के चरणों मे

: ६ :

वीर प्रभु के चरण कमल में वन्दन शत-शत वार करे।
तन से, मन से और वचन से अभिनन्दन कर भार हरें॥

इन्द्रभूति से अनमि नमाये अपने आध्यात्मिक वल से।
गिरते कितने गैर वचाये हत्याओं की हलचल से।
उपकृत हम चिर ऋणी आपके समय-समय उपकार स्मरें॥१॥

अनेकान्त आदर्श दिखाया वौद्धिक जगत जगाने को।
उत्पीड़ित वा शोषित मानवता का मान वढाने को।
तत्त्व अहिंसा दिया कि उससे दीनों का उद्धार करें॥२॥

मूक, निरीह, सहस्रों प्राणी यज्ञों के आवेदों में।
होमे जाते कितने वच्चे, मानव उन नरमेधों में।
उन पर क्या ? उन हिंस्र मनुष्यों के ऊपर आभार धरें॥३॥

संघ-संगठन की वह मौलिक, प्रवल शक्ति जो तुमने दी।
उसे अनेकों उत्तरवर्त्ती आचार्यो ने अपना ली।
'तुलसी' उसके सबल सहारे तेरापन्थ-प्रचार करें॥४॥

लय—वाजरे की रोटी पोई

७

लो ध्यान धरू,
अभिधान स्मरू,
प्रभु महावीर मैं तेरा।
सब भार हरू,
उपहार करू,
यह मन मन्दिर प्रभु मेरा ॥

त्रिशला के राजदुलारे,
सिद्धारथ कुल उजियारे,
त्रिभुवन के नयन सितारे,
चरम जिनराज,
भवाब्धि जहाज,
समस्त समाज,
स्मरण से मिटा रहा अन्धेरा ॥१॥

तिथि तेरस जन्म तुम्हारा,
सित पक्ष चैत्र का प्यारा,
भारत को मिला सहारा,
महोत्सव मान,
मिले सुर, रान,
कि तीन जहान,
निविडतम मे भी दिव्य उजेरा ॥२॥

लय—गुण चग भग वा लोटा

सब जग की माया त्यागी,
आन्तरिक प्रेरणा जागी,
एकाकी वीर विराग,
तपोवन-वास,
अटल उपवास,
सजग प्रति श्वास,
खास जब कर्म कटक ने घेरा ।।३।।

जो बही उपद्रव धारा,
सुर नर तिर्यञ्चों द्वारा,
हिम्मत को कभी न हारा,
कष्ट मरणान्त,
सहे चित्त शान्त,
न दिल विभ्रान्त,
त्रिवेणी संयुत मोह बिखेरा ।।४।।

बनकर प्रभु केवलनाणी,
बरसाई अमृत वाणी,
आध्यात्मिक सुख-सहनाणी,
विश्व उत्थान,
प्रयत्न महान्,
महा अभियान,
महाव्रत, अणुव्रत सुखद सबेरा ।।५।।

गोतम से गणधर भारी,
सती चन्दनबाला तारी,
है सब तेरे आभारी,
अमित उपकार,
किया जगतार,
अहिंसा द्वार,
जगत, शिव-पथ का किया निवेरा ।।६।।

यह वीर प्रभु का शासन,
है अटल धर्म का आसन,
प्राणाधिक प्रिय अनुशासन,
गुण-गण अनन्त,
जय हे भदन्त !
जय तेरापथ,
सदा 'तुलसी' आनन्द-बसेरा ॥७॥

गुरु

१

हे सद्‌गुरु एक सहारा ।
है सुगुरु सूर्य के विना घोर अधियारा ।
है सद्‌गुरु एक सहारा ।
यह निराधार ससार, नयन विस्फार, देखते हारा ॥

अज्ञान भरा है घट-घट मे,
दुनिया आन्तर तम के पट मे,
दिनकर भी कर न सकेगा जहा उजारा ॥१॥

तमसावृत जन दिग्मूढ हुए,
अपने को आप ही भूल गए,
प्रतिकूल वह रही जब जीवन की धारा ॥२॥

घर-घर मे घुसे लुटेरे है,
दुर्व्यसन जमाये डेरे है,
सर्वस्व लूट खाते अब कौन रुखारा ॥३॥

धनवान दु खी, धनहीन दु खी,
नही राज-प्रजा मे एक सुखी,
सबको अब सुख की राह दिखाने वारा ॥४॥

प्यासे को पानी, भूखे को
भोजन, आवश्यक ज्यो देखो,
नौका मे नियामक ज्यो जग-उजियारा ॥५॥

पापी महिपाल प्रदेशी से,
यदि मिले न सद्‌गुरु केशी से,
क्या सम्भव 'तुलसी' ऐसे हो निस्तारा ॥६॥

लय—है तेरा कौन सहारा

: २ :

हमारे ऐसे सद्‌गुरु की सदा शिर छत्र छाया हो।
सदा शिर छत्र छाया हो, शीघ्र पवित्र काया हो॥

धर्म रथ के वृषभ धोरी, सजोरी त्यागमय मूर्ति।
तपोवल भाल पर जिन के, तजी सव जग की माया हो॥१॥

अहिंसा के पुजारी जो, झूठ को पीठ जीवन भर।
स्वजीवन तुल्य पर-जीवन, वाक्य दिल में वसाया हो॥२॥

अदत्तादान के त्यागी, विरागी भोग-भामिनी के।
वदन में व्रह्म की दीप्ति, चमकता सूर्य आया हो॥३॥

न जिनके धाम मठ मन्दिर, न अस्थल स्थल में अपनापन।
समझ धन धूल सम, जीवन सुभिक्षा से निभाया हो॥४॥

प्रपंचों से परे, पंचेन्द्रियां मन अपनी मुट्‌ठी में।
शान्त रस सरस नस-नस में, रोव निज पर जमाया हो॥५॥

तरे भवसिन्धु से प्राणी, शीघ्र परमार्थ पथ पाकर।
मधुर उपदेश ही जिनका, कि ज्यों अमृत पिलाया हो॥६॥

पतित पंखी, प्रहारी से, बने गुरु-शरण से पावन।
स्वपर कल्याण ही 'तुलसी' लक्ष्य अपना वनाया हो॥७॥

लय—गजल

३.

जागृति जैन की जग मे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु।
सुतेरापन्थ पग-पग मे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु॥

तुम्हारे नाम की आभा अलौकिक विश्व मे छाई।
उमडता हर्ष रग-रग मे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु॥१॥

अनेको कष्ट जो सहकर जगाई जैन की ज्योति।
रोशनी प्रकट जगमग मे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु॥२॥

रची मर्याद की सरणी खची ज्यो तार चीवर मे।
चरम सीमा सूक्ष्म दृग् मे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु॥३॥

अठारह उनमठे मे जो लिखा था लेख हाथो से।
विलोकें आज के छक मे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु॥४॥

थर्पना की जो थावर दिन पुण्य परिणाम हम देखें।
महोत्सव माघ के मग मे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु॥५॥

व्यवस्थित सघ है सारा तुम्हारी पूज्य करुणा से।
आज के घोर कलियुग मे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु॥६॥

भारमल, राय, जय, मघवा, सुमाणिक, डाल गणि कालू।
उदित ज्यो सूर्य हो नभ मे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु॥७॥

सहस्र दो एक मे 'तुलसी', महोत्सव माघ की महिमा।
चतुरगढ भाग्य सोभग मे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु॥८॥

श्रमण है एक शत पिचपन, श्रमणिया तीन युत चउशत।
भक्ति रस रू-रू मे प्रगमे, जयो भिक्षु जयो भिक्षु॥९॥

वि० स० २००१, मर्यादा-महोत्सव, सुजानगढ़ (राज०)

लय—सुने है धाम ईश्वर के जगत रूठे तो

: ४ :

अहा ! अभिनव उच्छव छाए, तेरापन्थन में ।
मन उमड़-उमड़ घन आए, मण्डप मैदान मे ॥

जैन जगत की अनुपम ख्याति,
सद्‌गुरु मुक्ताफल मे ख्याति,
साकार उतर कर सरसाए भिक्खन अभिधान में ॥१॥

वाह माता दीपां की कुच्छी,
मानो कल्पलता की गुच्छी,
यदि तुलना हम कर पाएं, प्राची दिशि भान में ॥२॥

अब लों वह मरुधरा कहाए,
क्यों न आज हम क्रान्ति उठाएं,
वसुगर्भा कह बतलाएं, जन सकल जहान में ॥३॥

वीर वीरता विश्व-विभूति,
मूर्तिमती मानो मजबूती,
सतयुग की लहरें लाएं, कलियुग मध्याह्न में ॥४॥

आध्यात्मिक पथ एक पथिकता,
प्रतिभा पुंज विवेक अधिकता,
जिनवर की याद दिलाए, शिव-सुख सन्धान में ॥५॥

ग्रन्थ-गठन, संगठन संघ में,
दूरदर्शी नव-नव प्रसंग में,
कर स्मरण शीश झुक जाए, सहसा सम्मान में ॥६॥

दृढ-प्रतिज्ञ दिल निमल नगीना,
प्रबल पराक्रमशाली सीना,
यश झल्लरी झण-हणणाए, सुरनर इक तान में ॥७॥

लय—माहे रमजान मे

है अनुकरण उन्हीं का करना,
हो कटिबद्ध कहो क्या डरना,
कायरता नहीं सुहाए, उनकी सन्तान में ॥८॥

भाद्रव तेरस है स्मृति मावन,
वदन-वदन में भिक्खन-भिक्खन,
'तुलसी' पल सफल बनाए, गुरु के गुण-गान में ॥९॥

रामायण

दो हजार तीन की मवत नृपगढ में पावस सत्सग ।
मुनि गुणतीम मती अट्ठावन तन-मन गुरु मेवा का रग ॥
एक बीस छव शत युत सारे भिक्खन गण नन्दनवन में ।
सघ चतुष्टय प्रमुदित 'तुलमी' अटल एक अनुशासन में ॥

वि० स० २००३, चरम महोत्सव, राजगढ (राज०)

: ५ :

बोलो जय भिक्षु, आर्य कहलाने वाले !
बोलो जय भिक्षु, शिवपुर जाने वाले !

तेरापंथ पंथ के नेता,
जैन-संस्कृति के निर्णेता,
विमल आत्मबल विश्व विजेता,
धर्म-धुरा रखवाले ॥१॥

सन्त, अनन्त मनोबल भिक्षु,
धर्माचार्य, आर्य-वर भिक्षु,
अमित अथाह कार्य-कर भिक्षु,
दुनिया के उजियाले ॥२॥

मर्यादा पुरुषोत्तम भिक्षु,
संघ-संगठन कारक भिक्षु,
नव नव आविष्कारक भिक्षु,
निरुपम चरित निराले ॥३॥

अपनी मां के एक ही भिक्षु,
अपनी राह के एक ही भिक्षु,
सत्य सलाह के एक ही भिक्षु,
वीर वृत्ति में आले ॥४॥

स्वच्छ साधुता-पोषक भिक्षु,
दंभ शिथिलता-शोषक भिक्षु,
दुर्गुण के परिमोषक भिक्षु,
क्रान्ति जगाने वाले ॥५॥

लय—तोता उड़ जाना

वाह्याभ्यन्तर मे इक भिक्षु,
कहनी करणी मे इक भिक्षु,
सकट या दु ख मे इक भिक्षु,
क्या क्या गौरव वाले ॥८॥

मडप गू ज उठा दश-दिक्षु,
करें प्रतीक्षा कीर्ति-विवक्षु,
'तुलसी' रोम-रोम मे भिक्षु,
प्रतिपल सुमरन वाले ॥७॥

वि० स० २००३, मर्यादा-महोत्सव, चुरु (राज०)

: ६ :

हिल-मिल संघ चतुष्टय उत्सव आज मनाएंगे।
मर्यादा दिन की स्मृति में सब मंगल गान सुनाएंगे ।।

भिक्षु-जन्म से ही वह मरुधर मरुधर धरा कहाई है।
भिक्षु-प्रसव से वीर प्रसू दीपां कहलाई है।
(उस) वीर पुरुष की वीर कहानी मुख मुख पर सरसाएंगे ।।१।।

जैनधर्म की ज्योति जगाने कितने कष्ट उठाए है।
शिथिलाचार मिटाने कितने हेतु लगाए है।
(उस) वीर पुरुष की एक-एक कृतियां स्मृति-पथ पर लाएंगे ।।२।।

अति विशृंखल साधु सघ में एक शृंखला आई है।
पृथक्-पृथक् स्वछन्द-वृत्ति जड़ से छुड़वाई है।
(उस) वीर पुरुष का एक लेख दृग्गोचर करवाएंगे ।।३।।

जैनागम की भव्य भित्ति पर मन्दिर सवल सजाया है।
तेरापंथ अभिधान विश्व विख्यात बनाया है।
(उस) मंजुल मन्दिर की सुषमा अवलोकन लोग लुभाएंगे ।।४।।

भ्रातृभाव के विमल भाव जो मुनि सतियों में आए है।
एक सुगुरु मे भक्ति भाव केन्द्रित बन पाए है।
(उस) योगीराज की दूरदर्शिता सुमर-सुमर सुख पाएंगे ।।५।।

खपे अनेक छेक खा खेवट एक एकता मरने को।
पर न प्राप्त अल्पांश सफलता श्रान्ति विसरने को।
उस सफल मनोरथ महामना की महिमा अव महकाएंगे ।।६।।

लय—आदिनाथ आदीश्वर भिक्षु जग मे

न्यायाधीश, नियामक नीति-निपुण निर्मला निरुपम प्यारा।
निरतिचार निशल्य निरामय वह जग से न्यारा।
'तुलसी' उसकी गुण गाथा गाकर मण्डप गुंजाएंगे ॥७॥

चौपई

भारीमल्ल, ऋषिवर, जय स्वामी, मघ, माणिक, डालिम गुरु नामी।
कालू अष्टम पट अधिराजा, सुगुरु प्रसाद सदा सुख ताजा॥

दोहा

तेरस शुक्ला भाद्रवी, भिक्षु चरम कल्याण।
मिले सब नव रंग में, मण्डप में मण्डाण॥
बाह्याभ्यन्तर श्वेत है, सती सन्त समुदाय।
नव-नव श्रावक श्राविका, अनुरत मन, वच, काय॥
सती चार सौ सात हैं, मुनि शत-तयालीस।
लोक हजारों प्रगति पर, शासन विश्वावीस॥
दो हजार युत चार में, बीदासर सुखकार।
माघ महोत्सव में सुखद, तुलसी जय-जयकार॥

वि० सं० २००४, मर्यादा-महोत्सव, बीदासर (राज०)

: ७ :

तू मन मन्दिर में आजा,
तेरापथ के अधिराजा,
ओ ! भिक्षु ! भिक्षु-गणराजा,
वह सांवरी सूरत दिखाजा,
स्मृतिपट पर चित्र खिंचा जा।
तू मन मन्दिर में आजा॥

दीपां मां के लाल दुलारे,
वल्लूशाह के कुल उजियारे,
मरुधर रत्न चमकते तारे,
सारे महिमा महका जा।
तू मन मन्दिर में आजा॥

त्याग-वृत्ति जो तुमने धारी,
भर यौवन जग सम्पत्ति छारी,
विषम समस्या हल कर डारी,
सारी वह बात बता जा।
तू मन मन्दिर में आजा॥

सत्याग्रह की सबल प्रणाली,
चित्र ! कहां से ढूंढ निकाली,
उत्पथ तज निज आत्म-उजाली,
फिर से वह ज्योति जगा जा।
तू मन मन्दिर में आजा॥

लय—मेरा रंग दे तिरंगी चोला

असहयोग आन्दोलन छेडा,
शिथिलाचार समूल उखेडा,
पुण्य-पाप का किया निवेडा,
वह मधुरी तान सुना जा।
तू मन मन्दिर मे आजा ॥

भगवन् महावीर की भाति,
की थी सवल अहिंसक क्रान्ति,
दूर हुई दुनिया की भ्रान्ति,
वह शान्ति-स्रोत वहा जा।
तू मन मन्दिर मे आजा ॥

अपनाई असली आजादी,
पराधीनता व्याधि मिटादी,
जिससे कभी न हो वरवादी,
वह सादी रीत सिखाजा।
तू मन मन्दिर मे आजा ॥

सघ-सगठन की जो शक्ति,
आध्यात्मिक अनुभव अभिव्यक्ति,
धर्म, कर्म की विमल विभक्ति,
फिर इस युग मे दिखला जा।
तू मन मन्दिर मे आजा ॥

ऐक्य-ऐक्य सव जन चिल्लाते,
भरसक प्रवल प्रयास उठाते
पर पग-पग असफलता पाते,
अव उन्हे सफल वनवा जा।
तू मन मन्दिर मे आजा ॥

सहनशील सकट सहने मे,
वहनशील सयम वहने मे,
निर्भय सही वात कहने मे,
वह विभुता फिर विकसाजा।
तू मन मन्दिर मे आजा ॥

निज निर्मित उपवन की आभा,
कैसी खिली विश्व में वाह वाह,
क्यों नही निजर निहारे बाबा,
इक पल हित पलक बिछाजा।
तू मन मन्दिर में आजा॥

करें आज शत-शत अभिनन्दन,
कोटि कोटि तेरा अभिवन्दन,
संघ संघपति 'वदना नन्दन',
सब का दिल कमल खिला जा।
तू मन मन्दिर में आजा॥

वि० सं० २००४, चरमहोत्सव, रतनगढ़ (राज०)

• ८ •

दीपा के लाल दुलारे !
स्वीकार करो श्रद्धाजलिया रे !
जिनमत - गगन - सितारे !
अहो ! अखिल मघ-अखियो के तारे !

भक्तो के हृदय निवासी,
भक्तिमय कुसुम की राशि,
यह लो, लाखो जन के मन के रखवारे ॥१॥

फिर क्या उपहार सजाए ?
फिर क्या प्रभु चरण चटाए ?
इससे वढ, वस्तु कौन-सी पास हमारे ॥२॥

तुमने जो राह दिखाई,
घट-घट मे ज्योति जगाई,
छाई है, यत्र तत्र रो-रो मे सारे ॥३॥

प्रतिपल तुम पद-चिह्नो पर,
चलते व चलेगे जी भर,
इसमे वढकर क्या स्मारक प्रभो ! तुम्हारे ॥४॥

प्राणी-प्राणी दिल - प्रागण,
रोपे श्रद्धाकुर क्षण-क्षण,
जीवन के कण-कण मे यह प्रण है प्यारे ॥५॥

लय—साला जवानिया माणों

हम में हो अतुल मनोबल,
कायरता क्षय हो बल जल,
अविरल ऐसी करुणा का स्रोत वहा रे ।।६।।

श्रुति में, स्मृति में, संस्कृति में,
रमते रहो तुम कृति-कृति में,
गूंजे जग कोटि-कोटि 'तुलसी' जय-नारे ।।७।।

वि० सं० २००५, चरम महोत्सव, छापर (राज०)

दिल से शासन मे रमे, गुरु का हमे वरदान है।
आत्म-सयम मे रमे, गुरु का हमे फरमान है ॥

डोर सारे सघ की हो एक गुरु के हाथ मे,
व्यक्ति-व्यक्ति फिर मिले ज्यो दूध-पानी साथ मे,
त्यागमय जीवन बने, बस इसमे सबकी शान है ॥१॥

कार्य जो शासन-व्यवस्था के जरा प्रतिकूल हो,
मत करो, मत प्रेरणा दो, मत ना ऐसी भूल हो,
भावना हो सघ का मैं, सघ मेरा प्राण है ॥२॥

रात दिन अपने से अपना हो निरीक्षण लाजमी,
आज कुछ मैंने किया ऐसी हो दिल मे दिल जमी,
नियत दिनचर्या बने इसमे सदा उत्थान है ॥३॥

स्वय को या सघ को, ससार को धोखा न दो,
करके कहनी भी हो करनी, वेग से आगे बढो,
व्यक्ति, जाति, सघ का इसमे सदा कल्याण है ॥४॥

मत बनो पद की प्रतिष्ठा, नाम के भूखे कभी,
पर बनो लाघव से लायक, पद प्रतिष्ठा के सभी,
काम पीछे नाम, केवल नाम से नुक्सान है ॥५॥

तन मे जैसे प्राण, वैसे सघपति की शासना,
रोज रग-रग मे रमे, फूलो मे जैसे वासना,
हो सफल पल-पल सदा, जीवन का यह अभिमान है ॥६॥

लय—रग लाती है हिना पत्थर पर घिस जाने के बाद

घोर इस कलियुग में, हम सतयुग की लहरें लाएंगे,
भाव हो जन-जन के मन में, प्रण सफलता पायंगे,
पूज्य भिक्षु प्रसाद 'तुलसी' हृदय का अरमान है ।।७।।

वि० सं० २००५, मर्यादा-महोत्सव, राजलदेशर (राज०)

वीर के अनुगामी भिक्षु स्वामी के गुण गायेंगे।
तेरापथ-पथ की दुनिया मे आव वटायेंगे।
जैनधर्म धर्म की दुनिया मे आव वढायेंगे।
वटते-वटते जायेंगे, नही पीछे हट आयेंगे।
जीवन सफल वनायेंगे ॥

हे प्रभो ! यह तेरापथ,
मानव-मानव का यह पथ,
जो वने इसके पथिक, सच्चे पथिक कहलायेंगे।
आगे कदम वढायेंगे ॥१॥

जो पडे इसके प्रतिकूल,
कर रहे वचपन-सी भूल,
उनको भी अनुकूल पथ मे, प्राण प्रण से लायेंगे।
भ्रातृ भाव दिखलायेंगे ॥२॥

दान दया का जो सिद्धान्त,
दुनिया है जिसमे उद्भ्रान्त,
शीघ्र हो सव शान्त, ऐसा शान्तरस वरसायेंगे।
क्रान्ति भी फैलायेंगे ॥३॥

जो हमारा हो विरोध,
हम उसे समझे विनोद,
सत्य-सत्य शोध मे, तव ही सफलता पायेंगे।
कष्टो मे नही घवरायेंगे ॥४॥

लय—जिन्दगी है मौज मे

सत्य का बल है अटूट,
झूठ आखिर झूठ-झूठ,
दूध पानी का निवेड़, सत्य से दिखलायेंगे।
साहस सदा वढ़ायेंगे ॥५॥

दीपां के इकलौते लाल,
क्या वरणे तेरा खुशहाल,
वाह-वाह काम कमाल, मानव देख शिर डोलायेंगे।
अपना हृदय फुलायेंगे ॥६॥

तेरे जीवन का आकूत,
बतलाता यह संघ सबूत,
दुषम-सुषमा या सतयुग की, रचना हम बतलायेंगे।
ज्यों की त्यों रख पायेंगे ॥७॥

करें याचना हम सब एक,
अटल आत्मबल हो अतिरेक,
'सत्यं, शिवं, सुन्दरम्' का हम साक्षात्कार करायेंगे।
जीवन ज्योति जगायेंगे ॥८॥

अभिनन्दन हो बारम्बार,
अभिनन्दन हो बार हजार,
'तुलसी' तन मन रों-रों में गुरुवर को सदा बसायेंगे।
नहीं पल भर बिसरायेंगे ॥८॥

वि० संवत् २००६ चरम महोत्सव, जयपुर (राज०)

-११:

हे प्राण देवते ! तेरी ज्यो-ज्यो स्मृति हो रही।
मेरी रसना रस प्यासी वाचाल वन रही ॥

तू ने निजात्म-शोधन जिस युक्ति से किया।
जन-जन की मार्ग दर्शक अब युक्ति है वही ॥१॥

फिर सघ-सगठन का फूका जो मन्त्र सा।
परिणाम रूप नूतन ज्योतिमय है मही ॥२॥

शासन-विहीन गण मे अनुशासना भरी।
डगमगती जन-नैया की तू ने पतवार ग्रही ॥३॥

आडम्बरो से आवृत्त धर्मो की दुर्दशा।
देखी दयार्द्र चेता जो जाती ना कही ॥४॥

निश्छद्म ओ' निराला पथ वीर का लिया।
सुख शान्ति की तभी से स्रोतस्विनी वही ॥५॥

ईर्ष्या कलह के युग मे एकत्व जो रहा।
हृदयेश कोटि वन्दन श्रद्धाजलि यही ॥६॥

आनन्द मग्न 'तुलसी' सह सघ सामने।
जयपुर मे तेरापथ की देखो छटा मही ॥७॥

वि० स० २००६ मर्यादा महोत्सव, जयपुर (राज०)

लय—प्रभु पार्श्वदेव चरणो मे

: १२ :

प्रभु यह तेरापंथ सुप्यारा।
बना रहे आदर्श हमारा ।।

सत्य अहिंसामय जीवन हो,
सत्य अहिंसामय जन-जन हो,
विश्व-व्यापी हो सत्य अहिंसा
मुख-मुख मुखरित हो यह नारा ।
बना रहे आदर्श हमारा ।।१।।

दान वहीं जहां पुष्ट अहिंसा,
दया वही जहां नही हो हिंसा,
दान दया का आडम्बर रच
मत हो शोषण भ्रष्टाचारा ।
बना रहे आदर्श हमारा ।।२।।

संयम पोषण धर्म पिछाने,
त्याग तपोबल को अपनाने,
भोगों को कायरता माने
यही बने जीवन की धारा ।
बना रहे आदर्श हमारा ।।३।।

वीतराग को देव बनाएं,
जिन हो हरि, हर संज्ञा चाहे,
आखिर अपना हित अपने से
होगा समुचित साधन द्वारा ।
बना रहे आदर्श हमारा ।।४।।

लय—अमर रहेगा धर्म हमारा

सद्गुरु के अधिनायक पन मे,
सच्ची श्रद्धा हो तन मन मे,
सकल सघ हो एक गठन मे
छा जाए जग एक उजारा।
बना रहे आदर्श हमारा ॥५॥

नही विरोधो मे घबराये,
पद-यश-लिप्सा नही सताये,
हम अपना कर्तव्य निभायें
सच्चावट का एक सहारा।
बना रहे आदर्श हमारा ॥६॥

हम शिवपुर के सच्चे राही,
क्यो कोई आयेगी खाई,
भिक्षु भावना का दृढता से
'तुलसी' होगा अमर पुजारा।
बना रहे आदर्श हमारा ॥७॥

वि० स० २००६ चरम महोत्सव, हासी (पजाब)

: १३ :

मंगल है आज ! तेरे शासन में मंगल-मंगल।
शासन के ताज ! तेरे शासन में मंगल-मंगल।
भिक्षु गणी राज ! तेरे शासन में मंगल-मंगल॥

साधु सतियों में मंगल,
श्रावक समुदय में मंगल,
मंगल परिवार ! तेरे शासन में मंगल-मंगल॥१॥

मंगल तेरी मर्यादा,
नर हो चाहे कोई मादा,
सब पर इकसार, तेरे शासन मे मंगल-मंगल॥२॥

मंगलमय तेरी नीति,
संयम से ही हो प्रीति,
उज्ज्वल आचार, तेरे शासन में मंगल-मंगल॥३॥

ना कोई खींचा तानी,
चलती है नही मनमानी,
इक गुरु की कार, तेरे शासन में मंगल-मंगल॥४॥

सवकी है एक शैली,
ना कोई के चेला चेली,
सुन्दर व्यवहार, तेरे शासन में मंगल-मंगल॥५॥

लय—कैंसी फुंलवारी फूली

अद्भुत है सघ-सगठन,
परस्पर प्रेम सघन घन,
आगम-आधार, तेरे शासन मे मगल-मगल ॥६॥

जब तक नभ मे शशि भानु,
'तुलसी' तब तक मैं मानू ,
गण है गुलजार, तेरे शासन मे मगल-मगल ॥७॥

वि० स० २००७ मर्यादा महोत्सव, भिवानी (पजाब)

: १४ :

देव तुम्हारे श्रीचरणों में श्रद्धा का उपहार करें।
भक्त हृदय के सादर सौ-सौ साधुवाद स्वीकार करें ।।

कष्टों की परवाह भला क्या ? जब अपने को अभय किया।
औरों को क्यों हो पीड़ा ? जब हमने सबको अभय दिया।
संयम, समता और अभयता है यह मूल अहिंसा का।
तुमने बतलाया इससे, होता उन्मूलन हिंसा का।
इसी तत्त्व को हृदयगम कर, निज पर के सब पाप हरें ।।१।।

धर्म अहिंसा-संयम-तप-मय, सब जग का आधार यही।
अभयदान से बढ़कर कोई देने में दातार नहीं।
व्यसन पीड़ितों को यदि हम, व्यसनों की धुन से बचा सकें।
बुरे पाप है, यही बात पापीष्टों को यदि जचा सकें।
तेरे जीवन-मंथन से निष्कर्ष मिला, क्यों कर विसरे ।।२।।

भौतिकता के इस युग में अध्यात्मवाद का स्वाद मिला।
है कृतज्ञ हम सभी तुम्हारे, सचमुच ही सौभाग्य खिला।
पग-पग पर पाखण्ड पड़ा, प्रतिपद प्रवाह है पापों का।
हा ! हा ! हिंसा का हर घर-घर, आक्रन्दन अभिशापों का।
प्राप्त अमर वरदान तुम्हारा, भवसागर का स्रोत तरें ।।३।।

चाहें हम हर समय समन्वय-पथ के हामी हो रहना।
अपने सच्चे दृष्टिकोण को अविकल अटल रूप कहना।
सदा मनोबल बढ़े हमारा सदाचार पनपाने में।
रात्रि-दिन हो लगन हमारी तरने और तराने में।
इसी अटल विश्वास सहारे अजरामर पद सपदि वरें ।।४।।

लय—रामायण

सत्य-धर्म का झण्डा जन-जन के मन मन्दिर लहराए।
धर्म नाम से शोषण, अत्याचार कभी ना हो पाए।
ऐसा करे प्रसार व्यवस्थित और सगठित रूप लिए।
जीए न जीने को, पर हम सब अटल साधना लिए जियें।
देहली चतुर्मास चरमोत्सव, 'तुलसी' अभिनव भाव भरें ॥५॥

वि० स० २००८ चरम महोत्सव, दिल्ली

: १५ :

ओ ! श्वेत संघ के सबल सैनिकों ! अपना फर्ज बजाना है।
मिट जाए जनता की जड़ता, सक्रिय कदम उठाना है ।।

कैसी है दयनीय दशा मानव, मानवता छोड़ रहा,
चलता है बीहड़-पथ में पशुता से नाता जोड़ रहा,
बोझिल है जन-जन का जीवन स्वार्थों का साम्राज्य खिला,
दुराचार के गहन गर्त में मानो गिरने जगत चला,
पुनः चेतना देकर उसको फिर सन्मार्ग दिखाना है ।।१।।

लगी अखरने अर्थ-विषमता, पूंजी-श्रम का प्रश्न खड़ा,
सबका अग्रदूत बन आया वादों का व्यामोह बड़ा,
राष्ट्र-राष्ट्र को खड़ा निगलने अविश्वास है जन-जन में,
कथनी-करनी में न समन्वय लगे धनार्जन की धुन में,
समता, क्षमता, अनासक्ति का उनको पाठ पढ़ाना है ।।२।।

सन्तों की वह ओज भरी वाणी कुर्बानी साथ लिए,
निखर पड़ेगी जन-जन के अन्तस्थल को आह्वान किए,
एक जगेगी अभिनव ज्योति उसी प्रेरणा के बल पर,
बढ़ता ही जाएगा मानव उन्नत पथ पर जीवन भर,
कोई नही रोकने पाए ऐसा स्रोत बहाना है ।।३।।

मर्यादोत्सव के अवसर पर दृढ़प्रतिज्ञ ! सीना ताने,
'तुलसी' मानवता को रखते जन-जीवन को पहचाने,
क्यों होगा एहसान किसी पर होगा वही कार्य अपना,
जिसको सफल बनाने का देखा था भिक्षु ने सपना,
फिर से वही दिशा दर्शन दे अभिनव क्रान्ति जगाना है ।।४।।

वि० सं० २००८ मर्यादा महोत्सव, सरदारशहर (राज०)

लय—ओ ! चलने वाले रुकने का

: १६

करने जीवन का कल्याण,
मिला यह तेरापथ महान।
हमारे भाग्य बडे बलवान,
मिला यह तेरापन्थ महान।

भिक्षु ने ढूढ निकाला,
कैसा अमृतमय प्याला,
आला धार्मिक जग की शान,
मिला यह तेरापन्थ महान ॥१॥

जो व्यापक बनने आया,
है वर्गातीत कहाया,
पाया अपना ऊचा स्थान,
मिला यह तेरापन्थ महान ॥२॥

विद्या विकास है जारी,
भावुक मुनि सतिया सारी,
पर, चारित्र ही यत्र महान,
मिला यह तेरापन्थ महान ॥३॥

मौलिकता रहे सुरक्षित,
परिवर्तन सदा अपेक्षित,
लक्षित निज पर का उत्थान,
मिला यह तेरापन्थ महान ॥४॥

लय—बना मन मंदिर आलिशान

गुरु आज्ञा जहां बड़ी है,
वन पहरेदार खड़ी है,
विन आज्ञा हिले न पान,
मिला यह तेरापन्थ महान ॥५॥

भिक्षु की अमर कृति यह,
भिक्षु की दिव्य धृति यह,
सारा भिक्षु का सुविधान,
मिला यह तेरापन्थ महान ॥६॥

जिसका इसमें एकीपन,
उसका ही है यह शासन,
उसका, इससे है सन्मान,
मिला यह तेरापन्थ महान ॥७॥

लो जन-जन का अभिनन्दन,
गण सदा रहे वन नन्दन,
'वदना-नन्दन' का आह्वान,
मिला यह तेरापन्थ महान ॥८॥

भिक्षु का स्मृति दिन आया,
मिल संघ अभंग मनाया,
खिला सरदारशहर सुस्थान,
मिला यह तेरापन्थ महान ॥९॥

वि० सं० २००९ चरम महोत्सव, सरदारशहर (राज०)

१७

लो लाखो अभिनन्दन, आत्म-विजय का दो वरदान,
जय हे ! जय त्रिभुवन के त्राता, जैन जगत की शान ।।

मानवता के अटल पुजारी, महाव्रती शिरमोर,
दीन बन्धु समता के सागर, कोमल कहे कठोर,
सद्गुण पुञ्ज, निकुञ्ज शान्ति के, आस्था के आस्थान ।
लो लाखो अभिनन्दन, आत्म-विजय का दो वरदान ।।१।।

हिंसा से आतंकित युग था, दर-दर शिथिलाचार,
धर्म नाम पर घर-घर चलते धोखे के व्यापार,
विद्रोही बन तुमने फूका एक नया तूफान ।
लो लाखो अभिनन्दन, आत्म-विजय का दो वरदान ।।२।।

उडी धज्जिया अनाचार की, खुली पाप की पोल,
सत्य धर्म की विजय ध्वजा, फर्राई बजते टोल,
चमका चारो ओर वीर का शासन बन अम्लान ।
लो लाखो अभिनन्दन, आत्म-विजय का दो वरदान ।।३।।

वही धर्म है विश्वधर्म, जो विश्व बन्धुता धार,
अर्थाश्रित नही होता, सत्य-अहिंसामय साकार,
गूंज रहा है ओज भरा यह तेरा मंगलगान ।
लो लाखो अभिनन्दन, आत्म-विजय का दो वरदान ।।४।।

जातिवाद से अर्थवाद से व्यर्थवाद से दूर,
बलात्कारिता चाटुकारिता नही उसे मंजूर,
धर्म हृदय-परिवर्तन है, फिर क्या निर्धन धनवान् ।
लो लाखो अभिनन्दन, आत्म-विजय का दो वरदान ।।५।।

लय—भारत के दो लाल

मिला समुन्नत संघ संगठन यह उज्ज्वल आचार,
श्रद्धा, ज्ञान, चरित्र त्रिवेणी वहै विमल जलधार,
गौरवशाली सदा सुखी है, हम तेरी सन्तान ।
लो लाखों अभिनन्दन, आत्म-विजय का दो वरदान ॥६॥

वि० सं० २०१० चरम महोत्सव, जोधपुर (राज०)

चन्दन हो, अभिनन्दन हो, ये तन-मन चरण चढ़ाए हम ।
दीपा नन्दन ! आज तुम्हारी, स्मृति मे श्रुति सरसाए हम ॥

'जाए सद्धाए निक्खन्तो" इसी पक्ष को लक्ष्य बना।
वज्र हृदय बन चले अकेले, इसीलिए तुम महामना।
कभी न की परवाह राह पर, प्रतिपल पलक बिछाए हम ॥१॥

'पडिम पडिवज्जिया मसाणे' प्रथम श्मशान स्थान पाया।
अन्धेरी ओरी पा, मन नही भय-भैरव से घबराया।
बने पथिक से पन्थाधिप, तेरापन्थ कथा सुनाए हम ॥२॥

'अन्त समे मनिज्ज छप्पिकाए', इस पथ को अपनाया।
दया-दान सिद्धान्त शान्तचित्त, सही रूप से समझाया।
आवश्यकता तृप्ति धर्म है, आग्रह क्यो कर पाए हम ॥३॥

'पुढवी समो मुणी हवेज्जा,' वीर वाक्य को अपना कर।
उग्र विरोध विनोद समझकर, सहे परीषह भीषणतर।
फलत सत्य अहिंसा की अब, विजय-ध्वजा फहराए हम ॥४॥

'तवसा धुणई पुराण पावग' सफल बना इस शिक्षा को।
घोर तपस्या आतापन सह वाह ! वाह ! तीव्र तितिक्षा को।
मानी फिर' स्थिर पाल' 'फतह' की, वाणी क्यो बिसराए हम ॥५॥

'सज्झायम्मि रओसया,' जीवन मे खूब उतार लिया।
सरस सुगम अडतीस सहस्र पद्यो का सुन्दर सृजन किया।
दृढ अनुशासन, विमल व्यवस्था, को क्या बात बताए हम ॥६॥

---

*लय—अनुभव विनय सदा सुख अनुभव

'सच्चं भयवं' यह वाणी थी साध्य तुम्हारे जीवन का।
इसीलिए तो केन्द्र बने तुम जन-जन के आलोचन का।
'तुलसी' चरम महोत्सव बम्बई, सिक्कानगर मनाएं हम ।।७।।

वि० सं० २०११ चरम महोत्सव, बम्बई

१९

गुरुदेव ! तुम्हारे चरणो मे ये शीश स्वय झुक जाते है।
तव वाङ्मय अमृत झरणो मे ये हृदय हिलोरे खाते है।।

क्या वर्णन हो उपकारो का, जो जीवन जटिल समस्या है।
उसका भी सुन्दर समाधान पाया, हम प्रकट दिखाते हैं।।१।।

कैसी थी विशद विराट भावना जन-जन के उद्धरने की।
भयभीतो के भय हरने की, हम सुमर-सुमर सुख पाते हैं।।२।।

वह व्याख्या विरल अहिंसा की, हिंसा की झलक जरा न जहा।
जो विश्व-मैत्री का विमल रूप, जन-जन जिसको अपनाते है।।३।।

खुद जागो और जगाओ जग को, यही दया है दान यही।
इसमे सबका उत्थान मान, जन-जन मे जागृति लाते है।।४।।

सगठन का कैसा जादू, किया तुमने सावरिये साधु !
झगडो की जडे जला डाली, हम सब बलिहारी जाते है।।५।।

नही शिथिलाचार पनप पाया, सयम की रही छत्र छाया।
ओ ! वीर पिता के वीर पुत्र ! तेरापथ हम सरसाते है।।६।।

वह अटल रहे मर्यादा तेरी, लौह लेखिनी से जो लिखी।
समवेत चतुष्टय श्वेत-सघ माघोत्सव आज मनाते है।।७।।

वि० स० २०११, मर्यादा महोत्सव, बम्बई

लय—घुतश्याम तुम्हारे द्वारे पर

: २० :

मिला अमित आनन्द आत्मबल,
जन-जन का दिल कमल खिला।
जीवन को आलोकित करने
वाला अभिनव तत्त्व मिला॥

टूट गया धीरज का धागा
कब तक शिथिलाचार सहें।
मूढ़जनोचित मन्तव्यों पर
कैसे संयम भार वहें॥
क्रान्तिकारी इस चिन्तन में
बस जैनों को जैनत्व मिला।
जीवन को आलोकित करने
वाला अभिनव तत्त्व मिला॥१॥

प्रभो ! तुम्हारे पथ पर हमने
लो अपना बलिदान किया।
तेरापंथ हमारा प्यारा
सब पंथों को छान लिया॥
तेरापंथ नाम में ही तो
तव मम का एकत्व मिला।
जीवन को आलोकित करने
वाला अभिनव तत्त्व मिला॥२॥

लय—आज हिमालय की चोटी से

मत मारो मे अविकृत रूप
अहिंसा का अभ्यर्थन है।
और बचाओ की व्याप्ति
हिंसा का गुप्त समर्थन है।।

ऐसे सूक्ष्मेक्षण मे कैसा
आध्यात्मिक अपनत्व मिला।
जीवन को आलोकित करने
वाला अभिनव तत्त्व मिला।।३।।

दया पात्र हैं वे बेचारे
क्या उन पर हम रोष करें।
अपना पाप छुपाने करते
परनिन्दा जो जोश भरे।।

सहे विरोध विनोद समझ
यह वीरों का वीरत्व मिला।
जीवन को आलोकित करने
वाला अभिनव तत्त्व मिला।।४।।

शिष्य-प्रथा की वह विडम्बना
पद-लोलुपता पार हुई।
धन से धर्म नही होता
यह वृत्ति सफल साकार हुई।।

कटे कष्ट धर्मस्थानो के
जिन शासन का सत्त्व मिला।
जीवन को आलोकित करने
वाला अभिनव तत्त्व मिला।।५।।

वाचिक, कायिक और मानसिक
सयम आत्म-शुद्धि पथ है।
यही धर्म है, मोक्ष मर्म है
कठिन कर्म है, अवितथ है।।

वार भिक्षु की विमल घोषणा
से यह मधुर ममत्व मिला।
जीवन को आलोकित करने
वाला अभिनव तत्त्व मिला।।६।।

उच्चाचार उचित अनुशासन
सबल संगठन सार भरा।
लो लाखों श्रद्धाञ्जलियां
सद्गुरु हम सबका भार हरा।।
'तुलसी' यह चरमोत्सव का
मालव को बड़ा महत्त्व मिला।
जीवन को आलोकित करने
वाला अभिनव तत्त्व मिला।।७।।

वि० सं० २०१२, चरम महोत्सव, उज्जैन (मध्यप्रदेश)

२१

हम वह आदर्श दिखाए।
शासन की सुषमा दुनिया के कोने-कोने फैलाए ॥

सचमुच हम कितने सौभागी (जो) सदा त्रिवेणी से न्हाए।
मानव-जीवन, जैनधर्म और भैक्षव शासन पाए ॥१॥

एक-एक गण की मर्यादा जीवन प्राण बनाए।
'देह त्यजेन्न धर्म शासनं' दृढ संकल्प सझाए ॥२॥

सीमित संवेदन हो सबका, आस्था को अपनाए।
इधर-उधर नही डोलें तिल भर, 'पटवोजी' बन जाए ॥३॥

खींचातान करे क्यो कोई, (जो) तत्त्व समझ में ना'ए।
क्यों ऊडे जल पैठें, गणपति निज कर्तव्य निभाए ॥४॥

समझ भेद को समझौते मे मिल जुल कर सुलझाए।
बिछुडे दिल को हो यदि सम्भव अपने साथ मिलाए ॥५॥

अनुशासन का भंग अगर हो समुचित कदम उठाए।
आखिर नाक भाल मे नीचे रह कर शोभा पाए ॥६॥

एकाचार, विचार शृंखला, जुग-जुग जुडी रहाए।
'तुलसी' यह मर्याद-महोत्सव गण-वन को विकसाए ॥७॥

वि० सं० २०१२, मर्यादा महोत्सव, भीलवाडा (राज०)

न्हाए—स्नान में धोने-नीने मे नव

: २२ :

कोटि कोटि कण्ठों से गाएं जिनके गीत सुरम्य रे।
क्या जाने भिक्षु की महिमा कैसी अलख अगम्य रे ॥

है ममकार बन्ध का कारण, यह आध्यात्मिक शैली।
स्वामीजी के जीवन के कण-कण में देखी फैली।
है तेरापंथ भदन्त, कहा यों प्रभु पादाब्ज प्रणम्य रे ॥१॥

जिनके श्रम से हमें मिला यह शासन सुखद बगीचा।
नन्दन-वन की सुषमा लें सब, ऊंचा कौन है नीचा।
जीवन की सफल सुरक्षा है, जहां अननुमेय अनुपम्य रे ॥२॥

तार्किक युग में भी श्रद्धा का स्थान सदा है ऊंचा।
केवल तर्कवाद से पीड़ित है संसार समूचा।
हो तार्किक श्रद्धालु गण में एकान्ताग्रह अक्षम्य रे ॥३॥

मर्यादा निर्माण कला में देखा तरुण तरीका।
एकतन्त्र में प्रजातन्त्र का सबक कहां से सीखा?
सब शिष्यों में भर दिया, भरेगा जो उत्साह अदम्य रे ॥४॥

प्रत्युत्पन्न बुद्धि का वैभव अक्षय भरा खजाना।
औरों को शिक्षा देने का किसने तत्त्व पिछाना?
मत बोलो, पर व्यवहार करो अपना तन-मन संयम्य रे ॥५॥

लय—बड़े प्रेम से मिलना सबसे

वढे चलो सयम मे विनयी, आत्म समपर्णकारी।
श्रीआचार्य-चरण मे धरकर जीवनचर्या सारी।
फिर विचरो अप्रतिवद्ध सदा यह शिवपथ सरल सुगम्य रे ।।६।।

सीमा मे रहना है सकट, यह दिल की नादानी।
वाहर पडा कि सडा, प्रवाहाश्रित पूजाता पानी।
चन्देरी उत्सव मे 'तुलसी' सव सोचें क्षण विश्रम्य रे ।।७।।

वि० स० २०१४, मर्यादा महोत्सव, लाडनू (राज०)

: २३ :

गुरुवर ! तुम्हारे जीवन से दिव्य-ज्योति पाएं।
फिर एक वार सोए संसार को जगाएं॥

दृढ़ लक्ष्य कौन ऐसा ? हो दूसरा धरा में।
आराध्य ! श्रीचरण में, लो प्राण ये चढ़ाएं॥१॥

आदर्श वह अहिंसा, पल-पल की साधना में।
हिंसा ने हार मानी, इतिवृत्त क्या वताएं ?२॥

वह सत्य सत्य-निष्ठा, स्रोतस्विनी किनारे।
आतापना तपस्या, किसका कहो सुनाएं॥३॥

अस्तेय की शुभाभा, जन-जन के मन में छाई।
विश्वस्त थे सभी के, गौरव से गीत गाएं॥४॥

वर्चस्व ब्रह्म-व्रत का, साहित्य है दिखाता।
नवशील की वे वाड़ें, पढ़ आत्म-वल वढ़ाएं॥५॥

अपरिग्रहीश ! अनुपम, निस्संगता तुम्हारी।
अनशन में आत्म-दर्शन, लो वन्दनार्चनाएं॥६॥

निश्छल, उदार, व्यापक, अध्यात्म-चेतना में।
'तुलसी' सदैव पनपे, वे भिक्षु भावनाएं॥७॥

वि० सं० २०१५, चरम महोत्सव, कानपुर (उत्तरप्रदेश)

लय—इतिहास गा रहा है

२४

श्री भिक्षु का जीवन दर्शन,
मजुल मर्याद महोत्सव है।
जनता का सहज समाकर्पण, मजुल मर्याद महोत्सव है ।।

सघर्षो का इतिहास भरा,
आदर्शो का पथ हरा भरा।
मुनिचर्या का शुभ सजीवन, मजुल मर्याद महोत्सव है ।।१।।

सुन्दर सगठन प्रतीक बना,
निर्मल निरुपम निर्भीक बना।
अनुशासन का पावन उपवन, मजुल मर्याद महोत्सव है ।।२।।

यम नियमहीन अधुना युग मे,
निस्सीम निरवधिक इस जग मे।
मर्यादित विधि का अनुमोदन, मजुल मर्याद महोत्सव है ।।३।।

नव जागृति का सन्देश सबल,
ले आता प्रगति-पथ परिमल।
प्रतिवर्ष हर्ष का नव यौवन, मजुल मर्याद महोत्सव है ।।४।।

शासन का भावित शुभ भविष्य,
समुपस्थित करता सुगम दृश्य।
तेरापथ का अभिनव दर्पण, मजुल मर्याद महोत्सव है ।।५।।

लय—महावीर प्रभु के चरणो मे

सवत्सर भर का कार्यक्रम,
निश्चित करवाता यह निरुपम।
प्रतिरूप संघ का परिमार्जन, मंजुल मर्याद महोत्सव है ॥६॥

मुनियो को मिलते नये क्षेत्र,
भक्तो को मिलते नये नेत्र।
परिवर्तन वर्तन का साधन, मंजुल मर्याद महोत्सव है ॥७॥

घुल मिल अक्षरमय एक पत्र,
है धार्मिक जग का एक छत्र।
करने क्षण-क्षण अमृत वर्षण, मजुल मर्याद महोत्सव है ॥८॥

भिक्षु का भाव भरा मन्थन,
श्री जयाचार्य का सद्ग्रन्थन।
'तुलसी' का सफल सुफल चिन्तन, मजुल मर्याद महोत्सव है ॥९॥

वि० सं० २०१५, मर्यादा महोत्सव, संथिया (बंगाल)

देव ! चढाए श्रीचरणो मे क्या ऐसा उपहार हो।
जिसे देखकर जनता मे जागृत सच्चे सस्कार हो ॥

हँसती खिलती कोमल कलिया अञ्जलिया क्यो बन रही ?
कर स्पर्श करना भी जिनका आगम सम्मत हे नही।
वह क्या भेंट तुम्हारी ? जहा पर प्राणो पर सहार हो ॥१॥

स्वर्ण-रजत की वे मुद्राए, मणि भूपण अम्लान जो।
हीरे, माणिक, मू गे, मोती, विस्तृत वाहन यान जो।
काचन त्यागी को यह कैसे सामग्री स्वीकार हो ॥२॥

तैल चित्र या प्रस्तर प्रतिमा, घडे कि सुन्दर घाट से।
उच्च शिखर घर वर मन्दिर मे, करे प्रतिष्ठित ठाट से।
क्या यह पटु प्रतिभा का परिचय ? चेतन जड आकार हो ॥३॥

श्रद्धा करें समर्पित प्रतिदिन, साय प्रातरुपासना।
स्वर-लहरी सगीत सुनाए, पास न आए वासना ।
क्या हम सोचें ? आत्म-साधना केवल वाह्याचार हो ॥४॥

चिर, सुस्थिर साहित्य वनाए स्मारक के सदर्भ मे।
अणु-उद्जन वम से न नष्ट हो धरें अतल भूगर्भ मे।
फिर भी यदि क्या मानव मे दानवता का सचार हो ॥५॥

लय—नगरी-नगरी द्वारे-द्वारे

सच्चा स्मारक यही और उपहार यही अविकल्प हो।
पूज्य दिखाएं पथ पर चलने मानव दृढ़ संकल्प हो।
स्वयं सजग औरों का उद्बोधन अपना आचार हो ॥६॥

तेरापंथ मिला यह संघ चतुष्टय का सौभाग है।
चरण-चिह्न पर चलें कि हम सब, रग-रग में अनुराग है।
भिक्षु चरमोत्सव कलकत्ता, संकुल बड़ाबाजार हो ॥७॥

वि० सं० २०१६, चरम महोत्सव, कलकत्ता (बंगाल)

• २६

गुरुवर हमको मर्यादा का आधार चाहिए।
उच्च आचार चाहिए,
सत्य साकार चाहिए,
विमल व्यवहार चाहिए,
सदा सुविचार चाहिए॥

मर्यादा ही जीवन है, मर्यादा जीवन धन हे,
गण-वन मे इसका ही प्राकार चाहिए ॥१॥

मर्यादा चाहे छोटी, जीवन की सही कसौटी,
सयम को सयम का व्यापार चाहिए ॥२॥

छूटे तो तन यह छूटे, शासन सम्बन्ध न टूटे,
सबमे ऐसे ऊडे सस्कार चाहिए ॥३॥

छाए जो दाए वाए, तत्क्षण हम तोड गिरायें,
न हमे दलवन्दी की दीवार चाहिए ॥४॥

आते जो बाह्य नियन्त्रण, उनको क्यो कभी निमन्त्रण,
अपने से ही अपना उद्धार चाहिए ॥५॥

नियमित गति हो न निरकुश, प्रेरक 'हय रस्सि गयकुस,
डगमगती नैया को पतवार चाहिए ॥६॥

अपने सस्मरण सुनाए, आह्लादित सब बन जाए,
ऐसी घटनाओ का विस्तार चाहिए ॥७॥

लय—पानी आया पुला दे

रत्न-त्रय की जहां वृद्धि, मुनि-चर्या वरे समृद्धि,
फिर क्यों नां वंग, कलिङ्ग विहार चाहिए ॥८॥

'तुलसी' संयम के पथ पर, उन्नत हो जन-जीवन स्तर,
'हांसी' उत्सव का यह उपहार चाहिए।
परस्पर प्यार चाहिए ॥९॥

वि० स० २०१६, मर्यादा महोत्सव, हांसी (पंजाब)

२७

गुरुवर ! कण-कण मे नव चिन्तन भर दो ! भर दो ! भर दो !
भिक्षो ! जन-जन मे नव जीवन भर दो ! भर दो ! भर दो !

तुम धर्म-क्रान्ति-उन्नायक थे,
तुम अटल सत्य-निर्णायक थे,
शासन के भाग्य-विधायक थे,
अपना वह अनुपम अनुशीलन भर दो ! भर दो ! भर दो ! ॥१॥

तुम साध्य सिद्धि से स्वस्थ बने,
पथ-दर्शक परम प्रशस्त बने,
आत्मस्थ बने, विश्वस्त बने,
अविचल अविकल वह सद्गुण घन भर दो ! भर दो ! भर दो ! ॥२॥

कष्टो मे क्षमा तुल्य क्षमता,
थी स्थितिप्रज्ञ की सी समता,
सबके प्रति निर्मित ममता,
अपनत्व लिए वह अपनापन भर दो ! भर दो ! भर दो ! ॥३॥

सयम के सच्चे साधक थे,
आराध्य और आराधक थे,
जिनवाणी के अनुवादक थे,
वह धार्मिक मार्मिक सघन मनन भर दो ! भर दो ! भर दो ! ॥४॥

लय—उतरो तम पथ पर ज्योति चरण

सब जीवों के तुम मित्र रहे,
व्याख्या मे व्यक्ति विचित्र रहे,
आत्मा से पूर्ण पवित्र रहे,
आलोकयुक्त वह अनुकम्पन भर दो ! भर दो ! भर दो ! ॥५॥

तुमने नव-नव उन्मेष दिए,
तुमने नव-नव उपदेश दिए,
तुमने नव-नव आदेश दिए,
वह ओज भरा दृढ़ अनुशासन भर दो ! भर दो ! भर दो ! ॥६॥

संसृति में जीवित संस्कृति हो,
संस्कृति में अभिनव जागृति हो,
जागृति मे धृति हो, अविकृति हो,
'तुलसी' में वह अन्तर-दर्शन भर दो ! भर दो ! भर दो ! ॥७॥

वि० सं० २०१७, चरम महोत्सव, राजनगर (राज०)

२८

मन सुमर-सुमर नित भिक्षु नाम,
हो जायेंगे सब सिद्ध काम।
अजरामर अक्षय अटल धाम,
मन सुमर-सुमर नित भिक्षु नाम।

जो सन्त-प्रवर भव सिन्धु पोत,
बहते बन निर्भय प्रतिस्रोत।
जन-जन के जो प्रेरणा स्रोत,
कैसा जिनका लाघव ललाम ॥१॥

पावन पुरुषोत्तम के सपूत,
आर्हद् दर्शन के अग्रदूत।
अध्यात्मवाद में अनुस्यूत,
साधनाराम जो अविश्राम ॥२॥

प्रवृत्तिया सहज ही असकीर्ण,
जो अन्ध रूढिया जीर्ण-शीर्ण।
कर एक-एक सबको विदीर्ण,
उत्तीर्ण हुए अति दृढ स्थाम ॥३॥

शास्त्राम्बुधि का अभिनव निचोड,
धार्मिकता को दे नया मोड।
सारे जीवन की जोड-तोड,
तेरापन्थ उसका सुपरिणाम ॥४॥

लय—अभिनन्दन भारत के सपूत

मर्यादा ही जिसका अथ है,
मर्यादा ही जिसका पथ है।
मर्यादा घोष अनवरत है,
सन्तोष पोष सुषमा प्रकाम ॥५॥

सयम समाधिमय श्रमण संघ,
साध्वियां कुसुम कलियां अभंग।
श्रावक समाज ले नव उमंग,
है खड़ा एक टक दृष्टि थाम ॥६॥

मंगलमय मर्यादोत्सव में,
प्रमुदित सब पल-पल लव-लव मे।
'तुलसी' श्रद्धानत भक्त हृदय हो,
कोटि-कोटि सविनय प्रणाम ॥७॥

वि० सं० २०१७ मर्यादा महोत्सव, आमेट (राज०)

मगल आज मनाए गाए जय-जय मगल गान।
जय हे जय जिन शासन शेखर! सुन्दर जय अभिधान॥

प्रतिपल आत्म-साधना मे जय-जीवन ओत-प्रोत।
फैला जैन जगत मे अभिनव एक रश्मि का स्रोत।
शैशव वय सयम की सुपमा कैसी उज्ज्वल शान॥१॥

प्राकृत कवि, नैसर्गिक शासक, कलाकार साकार।
लेखक, वक्ता, सघ विभर्ता, वैज्ञानिक अविकार।
रूप अनेक, एक रसना यह क्या कर सके बयान॥२॥

वज्र-कठोर आत्म-बल अविकल, हृदय कुसुम सुकुमाल।
तेरे अनुशासन मे शासित—रहे वृद्ध, युव, बाल।
विस्मय न होगा किसे? देख कर सुगठित सघ-विधान॥३॥

वर्ण सावरे मे भी कैसा अद्भुत अनुपम ओज।
क्या मानव की बात, निकट टिक सका न मत्त मनोज।
धन्यवाद के पात्र मातृ-पितु, 'फल्लु', 'आईदान'॥४॥

धार्मिक, राजनीतिविद निर्मल, कुशल गच्छ नेतार।
प्रगति पथ के पुष्ट प्रणेता, अक्षय श्रुत भण्डार।
तूर्यासन पर सूर्य तेज वर, प्रगटे पुण्य निधान॥५॥

नय—भारत के दो नाम

तेरापथ के भाग्य विधाता, ऐ ! द्वितीय दैपेय !
गुञ्जे अगणित कण्ठ-स्वर से सद्गुण गरिमा गेय।
स्वीकृत हो श्रद्धाञ्जलियां हे ! श्रद्धा के आस्थान ॥६॥

तेरे इस पावन स्मृति दिन में संघ चतुष्टय लीन।
आंखों आगे आज नाचता तेरे युग का सीन।
'तुलसी' जय-जय की धुन में यह जयपुर राजस्थान ॥७॥

वि० सं० २००६ भाद्रव शुक्ला १२ जयपुर (राज०)

३०

तेरापथ के सप्तम गणपति 'डालिम' दिवस मनाएगे।
उज्जयिनी गुरु-जन्मभूमि मे गौरव गाएगे ॥

नौ मे जन्म, तेवीमे दीक्षा आत्म-साधना पाई है।
बहुश्रुति सम्यग् बने विकसित विभुताई है।
इकतीसे गुरुदेव दया से आगेवान कहाएगे ॥१॥

उग्र विहारी देश विदेशे विचर वरी विख्याति जो।
अद्भुत अनुभव प्राप्त किए क्या वर्णे ख्याति जो।
बडे भाग्य मे शासन मे ऐसे शासनपति आएगे ॥२॥

आकस्मिक घटना ने जो इतिहास नवीन बनाया है।
डालिम के उस दिव्य रूप ने हृदय डुलाया है।
भैक्षव गण के बच्चे-बच्चे जुग-जुग शीश झुकाएगे ॥३॥

प्रवचनकार रूप मे जब मण्डप मे मण्डित होते थे।
सिंह गर्जना, सुदिर घोप अपनापन ही खोते थे।
समवसरण मे विरले जो नही डगमग शीश डुलाएगे ॥४॥

ओजस्वी, वचस्वी और यशस्वी हो तो ऐसे हो।
सुनते हाक प्रतिद्वन्द्वी मानो भूमि मे धंसे हो।
सहजतया चरणारविन्द को विरले ही छू पाएगे ॥५॥

लय—भीखणजी का चेला दर्शन वेगा-वेगा दीज्यो जी

नर की परख करी तुमने अप्रतिहत प्रतिभा धारीजी।
कैसा शानदार चुना उत्तर-अधिकारीजी।
कालू भाल विशाल आज ही क्या कोई विसराएंगे ।।६।।

धन्य-धन्य हम सब हैं ऐसे गुरु रत्नों को पाकर के।
सदा बजाएं चैन बांसुरी हृदय फुला करके।
'तुलसी' शत वार्षिक यह मालव-चतुर्मास सझाएंगे ।।७।।

धर्म

१

शान्ति-निकेतन सत्य धर्म की जय हो जय।
करुणा-केतन जैन धर्म की जय हो जय॥

विश्व-मैत्री की भव्य-भित्ति पर,
सत्य अहिंसा के खम्भो पर,
टिका हुआ है महल मनोहर,
सदा सचेतन सत्य धर्म की॥१॥

अनेकान्त झडा लहराए,
जिन प्रवचन महिमा महकाए,
साम्य-भाव-सुषमा सरसाए,
सङ्कट-मोचन सत्य धर्म की॥२॥

वर्ण, जाति का भेद न जिसमे,
लिंग, रङ्ग का छेद न जिसमे,
निर्धन, धनिक विभेद न जिसमे,
समता-शासन सत्य धर्म की॥३॥

कर्मवाद की कठिन समस्या,
सुलझा देती तीव्र तपस्या,
नही फलाप्ति ईश्वर वश्या,
व्यक्ति-विकासन सत्य धर्म की॥४॥

शाश्वत अखिल विश्व को जाना,
नही किसी को कर्ता माना,
'तुलसी' जैन तत्त्व पहिचाना,
जीवन-दर्शन सत्य धर्म की॥५॥

लय—तोता उड जाना

: २ :

अमर रहेगा धर्म हमारा

जन-जन मन अधिनायक प्यारा,
विश्व विपिन का एक उजारा,
असहायों का एक सहारा,
सब मिल यही लगाओ नारा ॥

धर्म धरातल अतुल निराला,
सत्य, अहिंसा स्वरूप वाला,
विश्व-मैत्री का विमल उजाला,
सत्पुरुषों ने सदा रुखारा ॥१॥

व्यक्ति-व्यक्ति में धर्म समाया,
जाति-पांति का भेद मिटाया,
निर्धन, धनिक न अन्तर पाया,
जिसने धारा, जन्म सुधारा ॥२॥

राजनीति से पृथक् सदा है,
जग-झंझट से धर्म जुदा है,
मोक्ष-प्राप्ति का लक्ष्य यदा है,
आत्म-शुद्धि की वहती धारा ॥३॥

आडम्बर में धर्म कहां है,
स्वार्थ-सिद्धि में धर्म कहां है,
शुद्ध साधना धर्म वहां है,
करते हम हर वक्त इशारा ॥४॥

लय—बना रहे आदर्श हमारा

धर्म नाम मे शोषण करते,
धर्म नाम से जो घर भरते,
धर्म नाम मे लडते-भिडते,
वे सब धर्म कलङ्क विचारा ॥५॥

प्रलयङ्कार पवन भी बाजे,
उठे तूफानो की आवाजे,
पलटे सब जग रीति रीवाजे,
पर इसका ध्रुव अटल सितारा ॥६॥

धर्म नाम पर डटे रहेगे,
सत्य-शोध मे सटे रहेगे,
सकट हो यदि सकल सहेगे,
'तुलसी' निश्चित है निस्तारा ॥७॥

: ३ :

जय जैनधर्म की ज्योति, जगमगती ही रहे।
जिसको अपनाकर जनता, जड़ता जड़ मूल दहे ॥

'मित्ति मे सव्व भुएसु वेरं मज्झ न केणई'।
यह मूल मन्त्र समता का, (जिसे) अहिंसा जैन कहे ॥१॥

मुनियों के पच महाव्रत, अणुव्रत गार्हस्थ्य में।
लो यथा शक्ति जिन-आगम कहते 'धम्मे दुविहे' ॥२॥

आत्मा सुख-दु:ख की कर्ता, भोक्ता स्वयमेव ही।
है 'अत्तकडे दुक्खे' सव, अपने कृत कर्म सहे ॥३॥

सत्करणी सवकी अच्छी, जैनेतर जैन क्या?
कहते जिन बाल तपस्वी भी 'देशाराहए' ॥४॥

है विश्व अनन्त अनादि, परिवर्तन रूप में।
फिर स्रष्टा क्या सरजेगा, 'जव लोए सासए' ॥५॥

पुरुपार्थी वनो सुप्यारे, जो होना होने दो।
दमितात्मा सदा सुखी है, 'अस्सि लोए परत्थए' ॥६॥

आत्मा वनती परमात्मा, उत्कृष्ट विकास मे।
नव तत्त्व द्रव्य षट् घटना, 'समदिण्टी सद्धहे' ॥७॥

लय—प्रभु पार्श्वदेव के चरणो में

सिद्धान्त समन्वयवादी, स्याद्वादी का सदा।
अन्धाग्रह को निपटाने, 'पण्णत्ते सत्त नए' ॥८॥

क्यों जातिवाद को प्रश्रय, प्रश्रय सच्चरित्र को।
व्यापक बन 'तुलसी' बढ़ता 'मग्गे जिण देसिए' ॥९॥

: ४ :

धर्म में रम जाना,
ना मेरे मन घबराना,
अभय तू बन जाना,
ना मेरे मन भय खाना।

धर्म है शान्ति-सदन सुखकारी,
खिली है सयममय फुलवारी,
ज्ञान मलयाचल पवन सुप्यारी,
वास कर सुख पाना ॥१॥

धर्म नन्दन वन सुखद बगीचा,
शान्त-रस से सन्तों ने सींचा,
यहा नही कोई ऊचा-नीचा,
सुमनता सरसाना ॥२॥

धर्म है मान सरोवर भव्य,
त्याग-तप मोती जहां अलभ्य,
भव्य जन का है यह कर्तव्य,
हंस बन चुग जाना ॥३॥

धर्म ने कितने पतित सुधारे,
उजड़ते कितने खेत रुखारे,
डूबते कितने पार उतारे,
उन्हें स्मृति में लाना ॥४॥

लय—रम जाना

ऋषभ-सुत अठाणू ज्यो आवो,
विमल मन धर्म भावना भावो,
सरम 'तुलसी' शिक्षा अपनावो,
परम पद जो पाना ॥५॥

: ५ :

धर्म पर डट जाना, है वीरों का काम।
वीरता दिखलाना, है वीरों का काम॥

हुए न्यौछावर 'गजसुकुमाल',
'सुकौशल' ने कर दिया कमाल,
'सन्त खन्धक' सा हृदय विशाल,
वना कर दिखलाना, है वीरों का काम॥१॥

धर्म पर 'धर्मरुची' कुर्बाण,
चढ़ाये सन्त पांच सौ प्राण,
अड़िगता 'मुनि मेतार्य' समान,
वक्त पर वतलाना, है वीरो का काम॥२॥

धर्म में 'जम्बू' का अनुराग,
'नेमि-राजुल' का विमल विराग,
'विजय-विजया' के सदृश त्याग,
तुला पर तुल जाना, है वीरो का काम॥३॥

'सती सीता' का धीज महान,
'सुभद्रा' का सतीत्व वलवान,
'धारिणी' ज्यों जीवन वलिदान,
समय पर कर पाना, है वीरों का काम॥४॥

धर्म है अत्राणों का त्राण,
धर्म है अप्राणों का प्राण,
धर्म से है 'तुलसी' कल्याण,
हृदय से अपनाना, है वीरों का काम॥५॥

लय—डट जाना

६

जय जय धर्म सघ अविचल हो,
सघ सघपति प्रेम अटल हो।

हम सबका सौभाग्य खिला है,
प्रभु यह तेरापथ मिला है,
एक सुगुरु के अनुशासन मे,
एकाचार विचार विमल हो ॥१॥

दृढतर सुन्दर सघ-सगठन,
क्षीर-नीर सा यह एकीपन,
है अक्षुण्ण सघ-मर्यादा,
विनय और वात्सल्य अचल हो ॥२॥

सघ-सम्पदा बढती जाए,
प्रगति शिखर पर चढती जाए,
भैक्षव-शासन नन्दनवन को,
सौरभ से सुरभित भूतल हो ॥३॥

'तुलसी' जय हो सदा विजय हो,
सघ चतुष्टय बल अक्षय हो,
श्रद्धा, भक्ति बहे नस-नस मे,
पग-पग पर प्रतिपल मगल हो ॥४॥

लय—धर्म रक्षा धर्म

राजस्थानी विभाग

देव

१

अह सम परम पुरुष नैं समरू,

"परम पुरुष नैं सुध मन समरयां, आतम निरमल होय।
निज में निज गुण परगट जोय, अह मम परम पुरुष नैं समरू ॥

ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति पदमप्रभ नाम।
सप्तम स्वाम सुपास, चन्द्रप्रभ, सुविधि, शीतल अभिराम ॥१॥

श्रेयास, वासुपूज्य, जिन वन्दू विमल, अनन्त विशेष।
धर्म, शान्ति, कुन्थु, अर, मल्ली, मुनिसुव्रत तीर्थेश ॥२॥

नमि जिन, नेमिनाथ, पारस प्रभु, चौवीसमा महावीर।
भाव निक्षेप भजन करता जन, पावै भवदधि तीर ॥३॥

सिद्ध अनन्त आठ गुण नायक, अजरामर कहिवाय।
तीन प्रदक्षिण देई प्रणमु, थिर कर मन वच काय ॥४॥

गोतम आदि इग्यारह गणधर, धर्माचारज ध्येय।
पचवीस गुण युक्त विराजै, उपाध्याय आदेय ॥५॥

अढी द्वीप पनरा खेत्रा मे, पच महाव्रत धार।
समिति गुप्ति युत जो सुध साधु, वन्दू वारम्वार ॥६॥

दुषम आरे भरत क्षेत्र मे, प्रगट्या भिक्षु स्वाम।
अरिहन्त देव ज्यू धर्म दिपायो, पायो जग मे नाम ॥७॥

नय—गुणा पार पर पर्गिन्नि

पटधर भारमल्ल, ऋषिरायो, जयजश, मघ महाराज।
माणकलाल, डालगणि, कालू अष्टम पट अधिराज ॥८॥

भाग्य योग भिक्षु-गण पायो, तेरापन्थ प्रख्यात।
परम प्रमोद मनावैं गणपति, 'तुलसी' वंदना-जात ॥९॥

ॐ जय-जय त्रिभुवन अभिनन्दन
त्रिशलानन्दन तीर्थपते !
अयि त्रिशलानन्दन तीर्थपते !
अयि कलुष निकन्दन विश्वपते !
ॐ जय-जय त्रिभुवन अभिनन्दन ॥

तिमिराच्छादित भुवन में रे ! दिव्य दिवाकर उदित भयो,
करुणा-किरण निज किरण पसारे, मानो जग जागरण हुयो ।
निद्रा घूर्णित जन बोध लह्यो ॥१॥

अतुल अहिंसा धर्म गो रे ! मर्म दिखायो महितल में,
अक्षय अनुपम अविचल अविकल सुख पावें ज्यूं भवि पल में ।
न रहै भटक जग दलदल में ॥२॥

शिवपुर पावापुर धर्यो रे ! पावन होग्यो अघ दलिया,
डिम्डिम डिम्डिम डिम डिम बाजे, धौं धौं धमधम मादलिया ।
रयणावलिया दीपावलिया
सुर मोच्छव सुर नर सह मिलिया ॥३॥

यद्यपि प्रभु निर्वाण में रे ! तो भिण तेजपुंज रवे
निखराज नी निर्मल वनिता, नन्दनवन उपमा भिर ।
नित तीरथ प्रगट प्रभु नित,
गुण परिमल पसर पराग मिरे ॥४॥

भारिमल्ल, रायेन्दुजी रे ! जयजग, मघ, माणिकलाले,
डालिम कलिमल कन्दन कालू, वनपालू इक-इक आले।
'तुलसीगणि' गुरु अनुपद चालै,
मिल संघ सयल सायंकाले।
करो वीर प्रार्थना सम काले ॥५॥

३

श्री महावीर चरण मे सादर श्रद्धा-सुमन सभाऊ मैं ।
हार्दिक भक्ति-सलिल स्यू सींच-सींच कलियां विकसाऊ मैं ।।

ईश्वर अखिलेश्वर,
प्रभु परमातम परमेश्वर ।
प्राण-प्रिय जैन जिनेश्वर,
भास्वर अविनश्वर हृदय बसाऊ मैं ।।१।।

नही जिन जग कर्ता,
नही शकर सम सहर्ता ।
है तीन भवन रा भर्ता,
अविकार अमल प्रभु लक्षण गाऊ मैं ।।२।।

नहि घट-घट व्यापी,
यद्यपि घट-घट का ज्ञापी ।
सूरज सो ज्ञान प्रतापी,
भव पाप पक शोषण कर पाऊ मैं ।।३।।

नहि भगवन् भोगी,
नहि योगाराधक योगी ।
साकार इतर उपयोगी,
अवियोगी मिलन मन सदा लुभाऊ मैं ।।४।।

लय—देखो वीर जिनेश्वर वन्दन राय उदाई आवै रे

अमृत रस वरसी,
चुम्बक ज्यू चित्ताकर्षी,
उपदेश सदा शिव-दरसी,
'तुलसी' नत मस्तक शीश चढ़ाऊं मैं ॥५॥

गुरु

१

श्री भिक्षु स्वामी द्योनी मोहि भक्ति तुम्हारी,
भक्ति तुम्हारी प्रभु शक्ति तुम्हारी।
युक्ति मुक्ति पथवारी ॥

भक्ति विशाली भाली भगवन् निराली।
सुर हुए चरण पुजारी ॥१॥

शक्ति तुम्हारी प्रभु सत्य सपथ पर।
आत्मबली करनारी ॥२॥

युक्ति तुम्हारी भारी वर्णन-वर्णन।
जाणै सकल ससारी ॥३॥

तीन चीज की रीझ जो पाऊ।
तो होऊ त्रिभुवन सचारी ॥४॥

चारुवास छापुर विच सुमरै।
'तुलसी' नवम पटधारी ॥५॥

लय—श्याम कल्याण

: २ :

अयि जय भिक्षो दैपेय ।
तेरापन्थ पथाधिप, जैन जगत आधेय ॥

एकानन लख, कानन पंचानन लाजै ।
हंसासन वृपभासन तव उपमा साझै ॥१॥

नर वको मरुधर रो कवि कलना चीह्नी ।
कंटालिय पुर अवतर चरितारथ कीह्नी ॥२॥

विरस विषय रस त्यागी त्यागी चित्र न एह ।
दुनिया सतपथ लागी अद्भुत हम हृदयेह ॥३॥

नही केवल मनपर्यव अवधि स्यादन्ते ।
तदपि अलौकिक अनुपम पन्थ लियो भन्ते ॥४॥

अलग-अलग शिव जगमग सुन कोई चित्त चिडके ।
चित्र न चग मृदंगे महिषि सदा भिड़के ॥५॥

महावीर शासन में दक्षिण इण भरते ।
तव कृपया कलियुग में सतयुग सो वरते ॥६॥

है तव अटल आण में तीरथ च्यार खरे ।
छापुर चाखास विच 'तुलसी' तुम सुमरे ॥७॥

लय—आरती

३

मैं समरु गुरु भिक्खन नाम,
वा समरु गुरु भिक्खन काम।
वा गुरु भिक्खन को करणी,
भोर समय भजू भिक्षुगणी ॥
रटू भिक्षुगणी, समरू भिक्षुगणी,
भिक्षुगणी म्हारे मुकुटमणी।
रटू भिक्षुगणी, भिक्षुगणी तेरापन्थ धणी ॥

भिक्खन नाम बडो अभिराम,
भिक्खन नाम हृदय विश्राम।
सरल शुभकर शिव सरणी ॥१॥

नाम करू क्षण आत्माराम,
वर्णनातीत सुगुरु कृत काम।
स्थित चित सुणल्यो सयलगुणी ॥२॥

धुर नृपनगर को काम उदग्र,
साचो श्रावक वर्ग समग्र।
दिल अव्यग्र यथा धरणी ॥३॥

दोय बरस चरचा गुरु पास,
नहि निज अरचारो अभिलाष।
है स्याद्वाद नरनूज भणी ॥४॥

रघ—नगो बाद्गति

प्रतिभा रो अप्रतिम उजास,
आत्म अलौकिकता आभास।
विश्व विकास यथा द्युमणी ॥५॥

सरधा रो रे अजोड निचोड,
नहिं कोई रंच रह्यो झकझोड़।
पड़सी सब नें स्वीकरणी ॥६॥

शासन मन्दिर री रे दिवाल,
निज आशय सम करी सुविशाल।
ऊंडी नीव अतीव घणी ॥७॥

वर मरयाद लोहमय बीम,
ढाल ढाल-मय ढोला धड़ीम।
मति सकलना कली वणी ॥८॥

चित्र विचित्र भान्ति दृष्टान्त,
गुरु रज्जा सुख सज्जा शान्त।
सयन करै सुखे मुनि श्रमणी ॥९॥

सारो जगत हुयो इक ओर,
एक प्रभु कियो काम कठोर।
आरे इसो न जण्यो जणणी ॥१०॥

करणी करणी पड़सी याद,
दीपांगज री धर आह्लाद।
धुर धारी देह उद्धरणी ॥११॥

तारण आत्म तपस्या ताप,
प्रारम्भी भूतल आताप।
बतका नही जाये वरणी ॥१२॥

पुनरपि प्रेरित जन समझास,
प्रारम्भो कियो श्रवण प्रयास ।
सारी-सारी निशि जागरणी ॥१३॥

अन्न पाण रो किस्यो रे प्रमाण,
सासै मे रहता निज प्राण ।
सगे नहि बहु शिष्य शिष्यणी ॥१४॥

श्रावक श्राविका रो समुदाय,
अवलोकता आगम भाय ।
खूब करी प्रभु समभावणी ॥१५॥

वय सत सप्तति वर्ष री पाम,
नहिं ठहरचा कही एकण ग्राम ।
विचरचा नित जिम नभ तरणी ॥१६॥

यावज्जीव लियो संथार,
तिण माहे कियो अद्‌भुत कार ।
कौतुक सुणी गुरु-वागरणी ॥१७॥

जिनमत को रे जमायो झण्ड,
मेटयो शिथिलाचार अखण्ड ।
भवदधि तारण तू तरणी ॥१८॥

साठे भाद्रव सित शुभ पाम,
तेरस तिथि साध्यो सुरधाम ।
चरमोत्सव तिथि नेह तणी ॥१९॥

पटधर भारमल, ऋषिराय,
जय, मघ, माणक, डाल सुहाय ।
थारू सूरनि मन हरणी ॥२०॥

उगणीसै अठाणव साल,
राजाणै पावस रो काल।
चिहुं तीरथ की चोकी चोणी ॥२१॥

तीस मुनि श्रमणी पच्चास,
तन-मन मानै परम हुलास।
'तुलसी' न चूकै आणा अणी ॥२२॥

वि० सं० १९९८ चरम महोत्सव, राजलदेसर (राज०)

राग-द्वेष क्लेश रा कारण तारण तरण बतायाजी।
उत्तम अर्थ अनोपम भिक्षु स्वाम सझायाजी।
दीपाजी रा जाया म्हारा रोम राय विकसायाजी।
बल्लुजी रा जाया जिन मत सतपथ मय दरशायाजी।
बोधांकुर उगाया वचनामृत वरसायाजी॥

असयती रो जीवणो मरणो वाछन उभय समायाजी।
आदिम तत्त्व अलौकिक वरणत भरम भगायाजी॥१॥

प्रथम सयतासयत लक्षण पूज्य विचक्षण गायाजी।
सुन-सुन श्रोता निज तन मन मे मोद मनायाजी॥२॥

प्राण-विघात, वात मुख मिथ्या, करै चौर्य चित चायाजी।
मिथुन, परिग्रह विग्रह कारण जो सुख वायाजी॥३॥

स्पष्ट असयति इत उत जोवो जैनागम मे आयाजी।
सर्व विरति विन सयति नांहि साफ सुनायाजी॥४॥

देशव्रती पिण भगवती न्याये असयति मे आयाजी।
अत तिणरा अल्पाश नहिं लेखा मे न्यायाजी॥५॥

अव्रत जीवन या पुद्गल-सुख वछ्या अरु वछायाजी।
हुवे असयतित्व अनुमोदन मोद वधायाजी॥६॥

स्वीय असयम नहिं अनुमोदै सयमधर मुनिरायाजी।
तो पर रो अनुमोदन रोवत किम दुरितायाजी॥७॥

मय—आदिनाथ आदीश्वर भिक्षु

समस्त असंयम जीवन-वंछा राग कहायाजी ।
अमन चैन हित भिक्षु वंन भविजन सरधायाजी ॥८॥

इतर रहस्य अजाण छाण विन भोला नैं भरमायाजी ।
गौ-वाड़ो अरु ओतु अखाड़ो राड़ो ठायाजी ॥९॥

मुख-मुख में अरु लेख-लेख मे भेख-भेख भिडकायांजी ।
भैक्षव पन्थी दान दया रा पाया ढायाजी ॥१०॥

अगर पूछलै कोई पाछो आगम गम सुनवायाजी ।
तो कहै सामायक-धर साधु नहि छुड़वायाजी ॥११॥

तो छुडाण मे शकीलों प्रभु कद ना फुरमायाजी ।
नाहक भोली दुनिया वंचन तूद उठायाजी ॥१२॥

'मुञ्च, मुञ्च, मामुञ्च' सही दृष्टान्त शान्त चित्त ध्यायाजी ।
इम जैनेतर ग्रन्थे पिण जिन मत अपनायाजी ॥१३॥

धर्म नीति रो मार्ग निभावत निर्मलता निर्मायाजी ।
वर्तमान गृह नीति हेतु हा ना न कहायाजी ॥१४॥

ओ सत्यार्थ प्रकाशक सत्पथ दर्शक दीपां-जायाजी ।
अखिल जगत आभारी बांरो है इण न्यायाजी ॥१५॥

अतएव नित भिक्षु भिक्षु भविजन रटन लगायाजी ।
अल्पागे पिण उऋण होवण परम उम्हायाजी ॥१६॥

भारीमाल, नृप, जय, मघ, माणक, डाल, कालू गणरायाजी ।
हुलसी 'तुलसी' भिक्षु सुमरण स्तवन रचायाजी ॥१७॥

संवत दोय हजार शुक्ल पख भाद्रव मास सुहायाजी ।
भिक्षु चरम कल्याण जाण मन घन उमड़ायाजी ॥१८॥

गंगाशहर नहर सुकृत री मत कों भवि तरसायाजी ।
च्यार तीरथ चिहुं चोक चौपडा भुवने छायाजी ॥१९॥

वि० सं० २००० चरम महोत्सव, गंगाशहर (राज०)

भिक्षु भवि तारे तारे तारे, दीपा मात दुलारे ।
अखिल जगत उजियारे, भिक्षु भवि तारे तारे तारे ॥

विना इक दिनकर जगती की हुवै दशा कुदशा रे ।
अज्ञानान्ध तमस घर-घर मे निज कर चरण पसारे ॥१॥

घटा-पथ अरु कापथ घटना उभय वणी इक सारे ।
ठोट-ठोट लुक-छिप कर वैठ्या लु टन हेतु लुटारे ॥२॥

कलह कलाप उलूक उमाहित करन लग्या घुर्रारे ।
कुमति कुनय चमचेड कन्हैया उड-उड मोद मना रे ॥३॥

कमलाकर भवि नर कुम्हलाया तिग तिग तारा निहारे ।
चोकीदार सु घूर्णित लोचन मच रही हाहाकारे ॥४॥

इण अवसर मरुधर उदयाचल उदयो उचित प्रकारे ।
भानु सहस्रांश युत भानु भिक्षु नाम धरा रे ॥५॥

तरुण तेज कर तिमिर निकर नो खोज खतम निरधारे ।
त्याग राजपथ, इतर इतर पथ समुचित रूप दिखा रे ॥६॥

सकल पराहत चोर लुटेरा नहि कोई जोर सवारे ।
रजनीचर उलूक लूक्या गहनट मे नहि अहि होत वजारे ॥७॥

कुमति कुनय चमचेड कन्हैया दुर्जन हृदय समा रे ।
अंधकार दुराचार देख कर छुप गयो भय के मारे ॥८॥

लय—तुम ऐसा ना जी

भवि कमलाकर सब विकसाया दंभिक तार विडारे।
घूर्णित लोचन खबरदार जन खारिज हुये परवारे ॥९॥

जैन जगत दिशि प्रबल प्रकाशी प्रोद्भासी रवि द्वारे।
हाहाकार निवार उजागर त्रिभुवन नयन उघारे ॥१०॥

पातक पंक प्रचण्ड रश्मि स्यूं शोषित कर हरवारे।
ग्राखड़ पड़ पड़ तड़फड़ तड़फडत लाखां जीव उबारे ॥११॥

विश्वमित्र बण किरण मित्र की फैला रही जग सारे।
करत रुकावट अज्ञ आगिया उद्यम कर कर हारे ॥१२॥

रुचिर रोचि हो प्रतिदिन बधती हार्दिक भाव हमारे।
हे तरणे! तेरी निन 'तुलसी'! हुलसित कीर्ति उचारे ॥१३॥

गीतक छन्द

संवत् शुभ कर युग सहस्र 'रु एक दुर्ग सुजान मे।
भाद्रवी सित पक्ष भैक्षव चरम दिवस महान् में ॥
श्रमण श्रमणी एकसो[1] है, मुदित मन गुरु आन में।
जयतु जुग-जुग पथ तेरा सन्तपति सन्तान में ॥

वि० म० २००१ चरम महोत्सव, सुजानगढ़ (राज०)

---

१ ४० साधु और ६० साध्वियां

चरमोत्सव आज मनाओ,
भिक्षु समृति पथ मे लाओ।

शुभ सवत साठ अठारै,
गुरुवर सुग्धाम सिधारै।
भाद्रव तेरस भल भाओ ॥१॥

है देश मरुस्थल भारी,
वो प्रावतन पुर सिरियारी।
नैगमनय निगम निभाओ ॥२॥

वै कच्ची पक्की हाटा,
गुरुराज रह्या गहघाटा।
(मत) अनशन वात विसराओ ॥३॥

वा अन्तिम सीख मनूरी,
आध्यात्मिक प्ररक पूरी।
हृदयागण लेख लिखावो ॥४॥

साधार्मिक भक्ति सिग्वाई,
प्रभु दैविक शक्ति दिग्वाई।
गुणी गौरव मुग्व मुग्व गाओ ॥५॥

भिक्षु जीवन पर उप भारी,
ज्यो ग्याम विषय चित्त चारी।
समृति पट मे चित्र खिचाओ ॥६॥

लय—शासन गणी नागर

त्वर कुशाग्र प्रभु बुद्धि,
अनुपम गुण आत्म विशुद्धि ।
क्षण-क्षण अनुकरण कराओ ॥७॥

है पृथक्-पृथक् युग पन्था,
अपवर्ग 'रु संसृति गन्ता ।
मन्तव्य भव्य अपनाओ ॥८॥

वा सगठन की शैली,
इक नायक नीति नवेली ।
कर याद हर्ष उमड़ावो ॥९॥

मुख धन्य-धन्य ध्वनि गाओ,
जयकार अपार सुनाओ ।
वाह-वाह कहि वदन उछावो ॥१०॥

पट भारमल्ल, ऋषिराया,
जय, मघ, माणक कहिवाया ।
डालिम पट छोगां छावो ॥११॥

दो सहस्र दोय चउमासो,
डूंगरगढ़ अतुल उजासो ।
चिउ तीरथ चोक पुरावो ॥१२॥

सैंतीस श्रमण सुखकारी,
श्रमणी चवपन इकतारी ।
'तुलसी' गणि रंग रचावो ॥१३॥

वि० सं० २००२ चरम महोत्सव, श्री डूंगरगढ़ (राज०)

भीखणजी स्वामी भारी मर्यादा बाधी सघ मे।
प्रबल परतापी शासन वीर रो, जिणमे जग रही जगमग ज्योत हो ॥

देखी दशा है दयामणी आतो साधु सघ की आप हो।
काप्यो कलेजो म्हारै पूज्य रो किन्ही मूल सहित थिर थाप हो ॥१॥

सकल साधु अरु साधवी वहो एक सुगुरु री आण हो।
चेला चेली आप आपरा कोइ मत करो, करो पचखाण हो ॥२॥

गुरु भाई चेला भणी कोइ सूपे गुरु निज भार हो।
जीवन भेर मुनि माहुणी कोइ मत लोपो तसु कार हो ॥३॥

आवे जिणने मू डने कोइ मतिरे वधाश्रो भेख हो।
पूरी कर कर पारखा कोइ दीक्षा दिज्यो देख देख हो ॥४॥

बोल श्रद्धा आचार रो कोइ नवो निकलियो जाण हो।
मत चर्चो जिण-तिण कने करो गणपति वचन प्रमाण हो ॥५॥

जो हिरदै बैसे नही तोइ मति करो खीचाताण हो।
केवलिया पर छोडद्यो आ है अरिहन्ता री आण हो ॥६॥

उतरती गणी गण तणी कोइ मनि करो, मति सुणो सैण हो।
सजम पालो मानरो कोइ पल-पल छिन-छिन रैन हो ॥७॥

अपछदा गण स्यू टले कोइ एक, दो, तीन अवनीत हो।
साधु स्याने सरधो मती कोइ मत करो परिचय-प्रीत हो ॥८॥

तर्ज—बधावो गावा

इत्यादिक नियमे भरचो कोई लेख लिख्यो गुणराज हो।
संवत् अठारै गुणसठै कोइ माह सुदि सप्तमी साज हो ॥९॥

वार्षिक उत्सव आज रो कोइ होवै तिण उपलक्ष हो।
दूर दर्शिता एहमें कोइ जयगणि की परत्यक्ष्य हो ॥१०॥

शहर सिरदार सुहामणों जिहां चार तीरथ रा भंड हो।
'तुलसी' तेरापथ जयो कोइ जुग-जुग अटल अखण्ड हो ॥११॥

वि० सं० २००६ मर्यादा महोत्सव, सरदारशहर (राज०)

मावरा हो मावरा, म्वामीजी स्वामीजी,
म्हारै आगण भला पधारचा रे।
दुनिया री दुविधा मे डूवत,
लाखा जीव उधारचा रे।

भरी जवानी मे सुरज्ञानी जग की सारी ममता माया मारी।
कबीर वारी भारी चदरिया वो उजरी कर डारी रे।।१।।

मीरा रो सावरियो माइ, राम नाम पर तुलसीदास दिवानो।
म्हारो रे सावरो जिन वाणी पर बण्यो रह्यो परवानो रे।।२।।

प्रवल विरोधी झेल चुनौती वीहड पथ पर निकल पड्यो मरदानो।
'मोटा घर रो मान रडापो' केवल प्रभु रो वानो रे।।३।।

वर्ण वणाई जो रे वामणी क्यो कर छोडै लखण डूमणी वाला।
विना मावना माव नाम हा! अजव मोहिनी हाला रे।।४।।

गलँ कमुम्वो, वणँ कमुम्मल पेचा कपडा नयन निहारचा।
कर कानू पहिली अपणँ पर चेला ने ललकारचा रे।।५।।

वीत्यो वेद वडो हो वावो, जो चोतरफी गहरी दृष्टि दुडाइ।
रगडै झगडै को झूपडिया दागो दियामलाई रे।।६।।

दो वाता रो वावा दुश्मण शिथिलाचार स्वतन्त्रचारिता चीरी।
दो वाता रो पक्को प्रेमी सम सयम रो सीरी रे।।७।।

तय—रावना स्मवटा

संयम धर्म, अधर्म असयम, सुणोरे सयाणा कैसी करी कसोटी।
विखरया वाल संवार साधदी एक हाथ में चोटी रे ॥८॥

नइ मोड़ युग ने दी क्यों नहिं खुले आम म्हे कहि युगपुरुष पुकारां।
चरमोच्छव दिन सघ चतुष्टय 'तुलसी' तन मन वारां रे ॥९॥

चौपाई

तेरह सवत पुर सरदारा।
कियो चौमास मंत्रि-मनुहारा ॥
बयालिस मुनि सति अड़चाला।
'तुलसी' भैक्षव-गण रखवाला ॥

श्रीभिक्षु रो अभिनव वैभव।
एकसे चौवनवों चरमोच्छव ॥
श्रद्धाञ्जली समर्पित शतशत।
जगति चिर जय तव तेरापथ ॥

वि० सं० २०१३ चरम महोत्सव, सरदारशहर (राज०)

स्वामीजी रो शासण, म्हानै घणो सुहावैजी ।
वीर प्रभुजी रो आसण, म्हानै घणो सुहावैजी ।
घणो सुहावै, हृदय लुभावै, तारक तेरापन्थ ॥

मर्यादामय जीवन सारो, मर्यादा रो मान ।
आत्म-नियन्त्रण अरु अनुशासन है शासण री शान ॥१॥

एकाचार्य, एक समाचारी, एक प्ररूपणा पथ ।
ओ नूतन अद्वैत निकाल्यो, वाह ! वाह ! भिखणजी सत ॥२॥

पावस मे प्रसरे, करै अपणो शीत काल सकोच ।
निर्झरिणी जिम शासण सरणी अन्तर मन आलोच ॥३॥

सेवाभावी सुविनीता रो वढै सहज वहुमान ।
खेतसी तथा रायचन्द ओ ल्यो प्रत्यक्ष प्रमाण ॥४॥

निन्नाणू रपिया नोली मे, आयो विनय आचार ।
शेप एक वाकी, वाकी गुण, स्वर्ण सुरभि सचार ॥५॥

विद्या भारभूत वणज्यावै, कला कलकित होय ।
नही धारी गणि गण-इकतारी, वारी खूब विलोय ॥६॥

जो दलवन्दी रा दल-दल स्यू, दूर रहै दश हाथ ।
सघ हितेच्छु तिण री तुलना, रसिया रोहिणी साथ ॥७॥

नय—माढ

वा वक्तृत्व कला वेचारी, बिन वारी घन गाज।
नहिं विकसावै गणवन क्यारी, मूल विना किहां ब्याज ॥८॥

वात-वात, प्रवचन-प्रवचन में गण गणपति गो नाम।
सुविनीता री सरल कसौटी, दो चावल कर थाम ॥९॥

लिखित लेख ओ स्वामीजी रो शासण री बुनियाद।
हर वर्षे मरयाद महोत्सव, 'तुलसी' तिणरी याद ॥१०॥

सतरे पंचशया मुनि समणी श्रावक संघ सजोर।
शहर सरदार त्रयोदश सवत शासन हर्ष विभोर ॥११॥

वि० सं० २०१३ मर्यादा महोत्सव, सरदारशहर (राज०)

स्वामी भिखणजी ।

प्रगट्यो एक नयो उद्योत, जागी जग मे जगमग ज्योत ।
प्रवह्यो अटल धर्म को स्रोत, सागी भवसागर की पीत ।।

भीखण भीखण नाम स्यू रे म्हारो हुवै कलेजो हेम ।
सुमरण करता सकट भागै, जागै धार्मिक प्रेम ।।१।।

पगा लह्यो पथ साकडो रे निश्चित निज गन्तव्य ।
जिन-वाणी रे सबल सहारै बद्धमूल मन्तव्य ।।२।।

निरभिमान निसगता रे निर्भय हृदय सजोर ।
रूढिवाद रो कट्टर शत्रु भूलो म' मजन्यो चोर ।।३।।

अनुचित ही समझ्यो सदा रे अव्रत-व्रत रो मेल ।
उदाहरण है अम्ब-धतूरो, घी-तम्बाखू मेल ।।४।।

व्रत-महाव्रत रो आतरो रे देखो मोला दोय ।
शिष्य सुगुरु सवाद सलूणो, मक्खन लियो बिलोय ।।५।।

चूहा-बिल्ली रो चल्यो रे सदिया लग हुडदग ।
पर बाबा री वज्जर छाती, भूकी न भूठे जग ।।६।।

निज निन्दा काना सुणी रे, रह्यो प्रसन्न मन पूज ।
गुण भुण नहि कहि हृदय फूलायो, सत्पुरुषा री सूझ ।।७।।

लय—म्हारा थागणा सूना

संघ सुरक्षा कारणे रे, अनुशासन अनमोल।
सर्वोपरि शासण में राख्यो, मर्यादा रो मोल ॥८॥

टालो टालोकर तणों रे, पंडित भले प्रवीण।
पतित पुष्प की गति पहिचाणो, शोभै सलिला मीण ॥९॥

जीवन भर दियो संघ नै रे, सक्रिय शिक्षण स्वाम।
तारक तेरापन्थ वण्यो ओ, शक्ति स्रोत अभिराम ॥१०॥

भाद्रव तेरस महाप्रभु रे, लह्यो समाधि मरण।
'तुलसी' नवमाचार्य चतुर्विध संघ सुगुरु की शरण ॥११॥

वि० सं० २०१४ चरम महोत्सव, सुजानगढ़ (राज०)